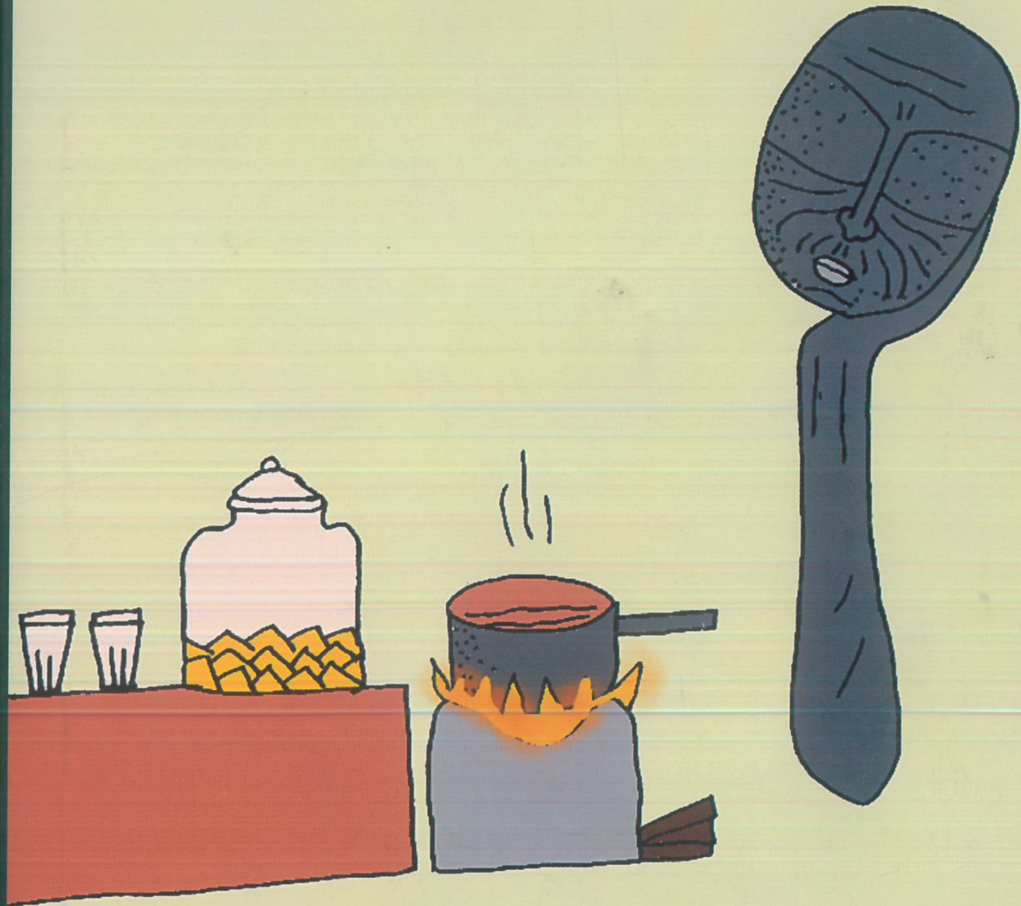


गुलो



सुभाष चंद्र यादव

गुलो सर्वहारा है। किसी ने उसे कभी हँसते हुए नहीं देखा। उसकी हँसी, उसकी ख़ुशी छिन गई है। उसके जीवन में सुख रात में आने वाले सपनों की तरह है। वह अवसाद में रहता है। उसकी ज़िंदगी किसी दु:स्वप्न के मानिंद तिरती रहती है। उसके लिए कुछ बचा नहीं है। सिर्फ़ एक डर है। कल का डर।

मूलत: मैथिली में लिखा गया 'गुलो' अत्यंत लोकप्रिय और प्रसिद्ध उपन्यास है। यह भारतीय समाज के सर्वाधिक ग़रीब और कंगाल लोगों के जीवन-संघर्ष की गाथा है। उपन्यास में उनके आंतरिक और बाह्य जीवन को बहुत मार्मिकता के साथ जीवंत रूप में चित्रित किया गया है। इस कृति में क्लासिक और लोककला की ख़ूबियों का अनुपम मेल है।

ग़रीब और पिछड़े समुदाय के जीवन को जिस अंतरंगता एवं प्रामाणिकता के साथ इस कृति में अंकित किया गया है, वैसा मैथिली उपन्यास के इतिहास में विरल है। 'गुलो' ने कला और भाषा संबंधी कई रूढ़ परंपराओं को तोड़ा है एवं नए प्रतिमान स्थापित किए हैं। इसने भाषा के कृत्रिम आभिजात्य को चुनौती दी है और जनभाषा के सौंदर्य को प्रतिष्ठापित किया है।

'गुलो' बहुत गंभीर, व्यंजक, सांगीतिक और अभिभूत करने वाली रचना है। यह उत्कृष्ट यथार्थवादी कला का अन्यतम रूप है।

गुलो

(उपन्यास)

सुभाष चंद्र यादव

मैथिली से अनुवाद

रमण कुमार सिंह

अंतिका प्रकाशन प्रा. लि.

ISBN 978-93-88799-71-3
गुलो

पहला संस्करण (सजिल्द) : 2021

मूल्य : 200.00 रुपए

प्रकाशक
अंतिका प्रकाशन प्रा. लि.
सी-56/यूजीएफ-IV, शालीमार गार्डन, एक्सटेंशन-II
ग़ाज़ियाबाद-201005 (उ.प्र.)
फ़ोन : +91-9871856053
ई-मेल : antika56@gmail.com
वेबसाइट : www.antikaprakashan.com

आवरण और अंदर के सभी चित्र : अनुप्रिया

मुद्रक : आर.के. आफसेट प्रोसेस, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32

GULO (Novel) by Subhash Chandra Yadav
Translated (Maithili to Hindi) by Raman Kumar Singh
Published by Antika Prakashan Pvt. Ltd., C-56/UGF-IV, Shalimar Garden Ext.-II
Ghaziabad-201005 (UP) India
Price : ₹ 200.00

गुलो



आज मकर संक्रांति है। रिनियाँ गीत गाती हुई आँगन लीप रही है। पता नहीं चलता कि कौन-सा गीत गा रही है। लेकिन सुर मधुर है। रिनियाँ बहुत उमंग में है। आँगन लीपा हो गया, तो बाहर दुकान को लीपने आ गई। पानी के फुहारे की तरह ओस गिर रही है और पछिया हवा चल रही है। बहुत ठंढ है। रिनिया सिर्फ फ्राक और सलवार पहने हुई है। उसकी माँ चिल्लाकर कहती है—हे भगवान! यह लड़की मुझे जीने नहीं देगी। अरी चादर तो ओढ़ ले।

नहीं ओढ़ूँगी। मैली हो जाएगी। रिनियाँ खीझकर कहती है और मिट्टी के ढेले को तोड़-तोड़कर बाल्टी के पानी में

डालती जा रही है। दुकान के सामने सड़क पर तीन लोग खड़े हैं, जो रिनियाँ की ओर ताक रहे हैं। शायद फ्राक से बाहर झाँकते उसके यौवन को निहार रहे हैं। रिनिया के पिता गुलो और उसकी माँ बेलाबाली इस बात को समझते हैं। गुलो गुस्से में उस पर फट पड़ता है—ऐ लड़की, लीपना छोड़ती हो या लगाऊँ झापड़। रिनियाँ दोनों हथेलियों से मिट्टी के ढेले को तोड़कर पानी में मिलाती है। पिता की बातों का वह कोई जवाब नहीं देती है। दुकान की लिपाई शुरू हो गई है। लोग वैसे ही खड़े हैं। एक व्यक्ति पूछता है—अरे यही कंबल मिला था? गुलो को कल नगर परिषद से एक कंबल मिला था। कंबल लकड़ी की छोटी-सी आलमारी पर रखा है। पुरानी धोती-साड़ी को सिलकर उसका खोल (कवर) बनाएगा, तभी ओढ़ेगा। रात में इतनी सर्दी थी, फिर भी नहीं ओढ़ा।

गुलो का बेटा छोटुआ हाथ-मुँह धोकर दुकान पर आया। देर से जगता है। सस्पेन में खौलती चाय उसने गिलास में उड़ेल ली। चाय से लबालब भरा गिलास...। तभी एक ग्राहक आया। गुलो ने सस्पेन में बची चाय गिलास में उड़ेली। थोड़ी कम लगी, तो छोटुआ के गिलास में से ले ली। इससे छोटुआ रूठ गया।

गुलो को गुस्सा आ गया—साले देखोगे? एक ही सस्पेन से मुँह तोड़ दूँगा। ग्राहक बैठा रहेगा?

छोटुआ मुँह लटकाए खड़ा रहा और चूल्हे पर हाथ सेंकता रहा। गुलो ने उसे दो रुपए दिए—जाओ लड़ुआ खरीद लेना। और चाय दे रहा हूँ।

ग्राहक गुलो का पड़ोसी ही है। नाम है राजू। राजू सुबह में रोज गुलो की दुकान में ही चाय पीता है। उधार में। चाय पीकर जाने लगा, तो गुलो ने पैसे माँगे—अरे रजुआ, क्या हुआ, (पैसे) दो न।

लौट के आ रहा हूँ। दस बजे।

तुमने कहा था कि सुबह ही दे दूँगा। अब कह रहे हो दस बजे। अच्छा, जाओ, दस भी देख लेता हूँ।

कुल पंद्रह चाय हो चुकी है। गुलो ने गिनती की। पंद्रह गुना पाँच यानी पचहत्तर रुपए। रजुआ ने कहा था कि सौ रुपए का नोट दे देगा। अब जो करे।

पाँच-छह दिन की मलाई जमा हो गई थी। आज रिनियाँ ने उसका

घी बनाया। सौ ग्राम के करीब घी निकला होगा। खिचड़ी में चलेगा। लाई बनाने में बहुत खर्चा है। उतने पैसे हैं नहीं कि लाई बना सके।

गुलो के दो बेटे और दो बेटियाँ हैं। एक बेटा और एक बेटी की शादी हो चुकी है। बाकी दोनों अभी छोटे हैं। बेटी रिनियाँ अभी बारह-तेरह साल की है और बेटा छोटुआ दस-ग्यारह साल का होगा। रिनियाँ छठी क्लास में पढ़ती है। जब से माँ बीमार पड़ी है, तब से वह स्कूल कम ही जाती है। आँगन-घर, भानस-भात, और दुकान का काम करती है। छोटुआ बिल्कुल नहीं पढ़ा। अब प्लाई मिल में साठ रुपए दिहाड़ी पर काम करता है।

मुझे पहचानते हो? नहीं पहचानते हो, तो पहचान लो। मैं हूँ गुलो मंडल। इसी चौक पर घर है। मेरे साथ ढिठाई करोगे, तो समझ लो। मैं हूँ गुलो मंडल... किसी पर गुस्सा आने पर गुलो यही कहता है।

पचास-पचपन साल का गुलो एकदम दुबला-पतला है। चाय बेचता है। दुकान पर बैठे-बैठे खाँसता रहता है। दमे की बीमारी है। पत्नी भी हमेशा बीमार रहती है। उसका भी दम फूलता रहता है। वह दुकान के एक किनारे बैठी रहती है। कोई काम नहीं करती है। दुकान किसी तरह चल रही है। बस डेढ़-दो सेर दूध की खपत। और सेर भर-तीन पाव दूध की चाय तो वह खुद ही पी जाता है। उसके परिवार में सभी चाय पीनेवाले हैं। दो बार सुबह और दो बार शाम को चाहिए ही।

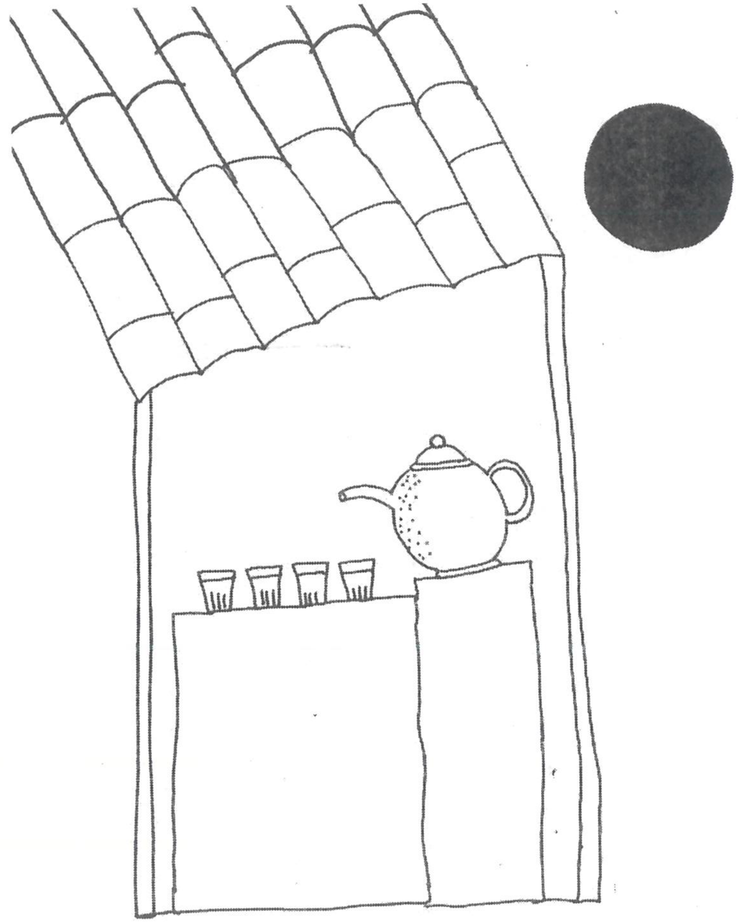
गुलो पहले सुपौल के बीचोंबीच रहता था। अब कोसी चौक पर रहता है। गोठ (बीच सुपौल) में पुश्तैनी बासडीह था, घर था। गुलो का पिता रेलवे में पेटमैन था। गुलो और उसकी दोनों बहनें छोटी ही थीं, जब उनकी माँ मर गई। गुलो के पिता मुनीलाल पर मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा। नौकरी करे या बाल-बच्चों की परवरिश? बनर्जी साहब सहरसा में रेलवे के बड़ा बाबू थे। बड़ा बाबू के लिए मुनीलाल सुपौल से मछली लेकर जाता था। बड़ी-बड़ी जिंदा कबई मछली। इसलिए बड़ा बाबू को मुनीलाल प्रिय था। मुनीलाल नौकरी छोड़ देगा, तो उतनी अच्छी मछली बड़ा बाबू को कौन खिलाएगा? बड़ा बाबू की इच्छा नहीं थी कि मुनीलाल नौकरी छोड़े। वह भी रेलवे की सरकारी नौकरी। लेकिन नौकरी नहीं छोड़ेगा, तो बच्चों को पालेगा कौन?

बड़ा बाबू ने कहा, मुनीलाल, हम कोह ने नहीं सोकता तुम चाकरी कोरो। ना चाकरी छोड़ दो। तोमारा मोरजी।

मुनीलाल ने नौकरी छोड़ दी। घर के पास ही चाय की दुकान शुरू की। दुकान की कमाई से ही बच्चों की परवरिश की। बेटे-बेटी की शादी की। सबके बाल-बच्चे हुए। बड़ी बेटी का भाग्य अच्छा नहीं था। तीन संतान के बाद वह विधवा हो गई। ससुराल में उपेक्षा होने लगी, तो मुनीलाल ने बेटी और नाती-नातिन को अपने पास बुला लिया। नाती को चाय की दुकान पर रखने लगा। नाती चतुर-चालाक था। एक बार मुनीलाल बीमार पड़ा, तो उसके नाती ने अकेले दुकान को सँभाल लिया। तब से वही दुकान चलाने लगा। बाद में उसने नाना को ठगकर बासडीह अपने नाम करा लिया। गुलो को वहाँ से भागना पड़ा। गोंठ सुपौल छोड़कर वह कोसी चौक पर चला आया। सड़क के किनारे बिहार सरकार की जमीन पर उसने घर बसा लिया और चाय की दुकान शुरू की। गुलो ने अपने भांजे को कभी माफ नहीं किया। भांजा अब पैसेवाला बन गया है और गुलो कंगाल।

रेलवे में रहते हुए मुनीलाल ने लोहे के कई सामान बनवाए थे। छोटी-बड़ी खुरपी, कुदाल, खंती, दाब, कुल्हाड़ी, भाला, बर्छी। ये सब वस्तुएँ अब भी गुलो के घर में हैं। यही उसकी बपौती संपत्ति है। बाप-पुरखे की विरासत के नाम पर और कुछ नहीं है। गुलो अथाह चिंता में रहता है। उसे कभी किसी ने हँसते हुए नहीं देखा होगा।

रिनियाँ बहुत सुंदर है। अपनी बड़ी बहन रूनियाँ से ज्यादा सुंदर। एक तो रूना थी ही इतनी सुंदर कि उसकी शादी बिना दहेज के हो गई। गुलो के पास कुछ था भी नहीं कि वह दहेज देता। दस लोगों को उसने खिला दिया, वही काफी था। लेकिन रिनियाँ तो कमाल है। हँसती है, तो लगता है जैसे फूल झर रहे हों। फूलों की तरह उज्ज्वल हँसी। रिनियाँ की हँसी में जादू है। चुंबक की तरह खींचती है। निश्छल निर्मल हँसी। चाँदनी सी जगमगाती हुई। उसके चलने, बोलने, देखने का ढंग लोगों को मोह लेता है। जो देखता है, देखता ही रह जाता है।



रिनियाँ किसी को कुछ बोल देती है। बात चाहे जैसी भी हो, किसी को बुरी नहीं लगती है। एक रुपए में दो बीड़ी मिलती है। रिनियाँ को कोई दुकानदार दो बीड़ी देता है, तो कहती है, ईह बुढ़वा, सिर्फ दो ही। बीड़ीवाला एक और दे देता है।

पावरोटीवाले को कहती है, आप तो बड़े कंजूस हो। और हल्की जली हुई पावरोटी उठा लेती है। बेकरीवाला बस टुकुर-टुकुर देखता ही रह जाता है।

किसी को केला खाते हुए देखती है, तो कहती है, भैया, आप अकेले-अकेले केला खाओगे। और वह भी उसे एक केला दे देता है।

रिनियाँ के पास चप्पल नहीं है। इस शीतलहरी में नंगे पैर दुकान के काम करती रहती है। चापाकल दूर में लगा है, वहाँ से पानी लाती है। चाय के जूठे गिलास धोती है। कभी चीनी, तो कभी चाय पत्ती लाने के लिए दुकान जाती है। पैर लोहे की तरह सर्द हो चुके हैं। किसी रोज छोटुआ की चप्पल पहन लेती है, तो दोनों भाई-बहन में मारपीट हो जाती है।

घर-आँगन में झाड़ू लगाना, बर्तन माँजना और खाना बनाना रिनियाँ की जिम्मेदारी है। उसकी माँ बैठे-बैठे काम बताती रहती है। माँ का काम बताना रिनियाँ को बुरा लगता है। वह तो खुद ही सारा काम करती है, फिर भी माँ गर्दन पर सवार रहती है। रिनियाँ तमक उठती है—नहीं करूँगी।

अरे देखिए तो इस लड़की को! उसकी माँ कहती है।

रिनियाँ किसी बात का मलाल नहीं रखती है। तुरंत काम में लग जाती है, जैसे कुछ हुआ ही न हो। कितनी गाली दे, कितनी बातें सुनाए, रिनियाँ सब कुछ भूल जाती है। और आँगन से ही गुहार लगाने लगती है—ए बाबा, थोड़ी चाय मुझे भी दो।

देखेगी तू, कितनी बार चाय पिएगी रे-बाबा गुस्सा हो जाते हैं।

रिनियाँ कोई जवाब नहीं देती है और चुपचाप झाड़ू लगाती रहती है।

उसे स्कूल में पाँच सौ रुपए मिले थे। पोशाक राशि। दीदीजी बोली थीं जूते खरीद लेना।

रिनियाँ पूछती है, बाबा कब खरीद दोगे?

लेना न, खरीद दूँगा। बाबा सब दिन यही बात कहते हैं। कभी खरीदते नहीं हैं।

एक दिन रिनियाँ ने कहा, बाबा, पाँच रुपए दो।

क्या करोगी?

मेला देखूँगी।

ईह, बड़ी आई है मेला देखनेवाली। भागती है यहाँ से कि नहीं? बाबा गुस्सा हो गए।

रिनियाँ पर रणचंडी सवार हो गई। फुफकारते हुए बोली, पाँच सौ

रुपए लाकर आपको दिए थे। सब चट कर गए और अब पाँच रुपए निकालने में मिरमी उठती है। गुलो का चेहरा विवर्ण हो गया। रिनियाँ हनहनाती हुई आँगन चली गई।

जलावन की खातिर रिनियाँ बगीचे-बगीचे भटकती रहती है। कभी आम की टहनियाँ, कभी बाँस की छड़ियाँ, कभी सूखे पत्ते जो मिलता है, बटोर लाती है। बगीचे में जलावन नहीं मिलता है, तो प्लाई मिल पर चली जाती है। प्लाई की टुकड़ियाँ चुनती रहती है। छोटुआ उसी मिल में काम करता है। उसे यह अच्छा नहीं लगता है। रिनियाँ प्लाई के टुकड़े चुनती है, तो छोटुआ को शर्मिंदगी महसूस होती है।

एक दिन सुबह-सुबह ही रिनियाँ फूट-फूटकर रोने लगी। उसकी पसली में छोटुआ ने एक मुक्का मार दिया था। रिनियाँ कहती रही कि नमकीन उसने नहीं खाया है, लेकिन छोटुआ को विश्वास नहीं हुआ। मुक्का मार बैठा। रिनिया का रुदन सुनकर गुलो का कलेजा फट गया। लड़की को बेकार में ही मार पड़ गई। छोटुआ पर गुस्से में फट पड़ा, रे साला, तुमने उसे मारा क्यों? जलती लकड़ी तेरे सिर पर दे मारूँ? साला, बड़े-छोटे का जरा भी विचार नहीं। कहता रह गया कि नमकीन चूहा ले गया होगा, लेकिन यह साला समझे तब न!

छोटुआ ने शाम को ही पाँच रुपए का नमकीन खरीदा था। उसमें से थोड़ा सा खाया था और बाकी लकड़ी की आलमारी पर रख दिया था। सोचा था, सुबह में चाय के साथ खाऊँगा। जैसे ही देखा कि नमकीन नहीं है, सिर्फ कागज बचा है, तभी रोने लगा। उसे पूरा यकीन था कि नमकीन रिनियाँ ने ही खाया होगा। भले रिनियाँ ने आज नमकीन न खाया हो, लेकिन उसकी ऐसी आदत है जरूर। जैसे ही कोई चीज देखती है, तुरंत मुँह में डाल लेती है।

छोटुआ आठ बजे काम पर जाता है। उससे एक घंटे पहले सोकर उठता है। उठते ही चाय पीता है। चाय के साथ बिस्कुट, लड़ुवा या पावरोटी खाता है। दूसरी बार रोटी के साथ चाय पीता है और काम पर निकल जाता है।

आज उसकी पहली चाय रखी हुई है और वह रूठा हुआ खड़ा है। कह रहा है—काम पर नहीं जाऊँगा।

गुलो छोटुआ की तरफ देखता रह जाता है। काम पर नहीं जाएगा, तो एक दिन की दिहाड़ी चली जाएगी। साठ रुपए का नुकसान होगा। साठ रुपए में गुलो एक दिन गुजार लेता है।

अरे, काम पर नहीं जाएगा, तो खाएगा क्या? माँ छोटुआ से कहती है।

छोटुआ कोई जवाब नहीं देता है। रिनियाँ रो ही रही है। लेकिन रोने की आवाज घटती जा रही है। गुलो पाँच रुपए का नोट निकालकर छोटुआ को देता है—जाओ, नमकीन खरीद लेना।

छोटुआ रुपया नहीं लेता है। स्तंभित सा खड़ा रहता है। गुलो रुपए उसके आगे में रख देता है। गुलो रिनियाँ को बहलाने लगता है—चुप हो जाओ। तुम भी कोई कम नहीं हो। यह तो हरामी है ही।

थोड़ी देर के बाद गुलो पाँच रुपए का नोट उठाकर छोटुआ को थमा देता है—लो न, चाय ठंडी हो रही है। लेकर आओ, तब तक चाय गर्म कर देता हूँ।

इस बार छोटुआ मान जाता है।

काम शुरू किए हुए छोटुआ को दो महीने पूरे हो गए हैं। घर में उसका मान बढ़ गया है। अब सब चीजें पहले उसे ही मिलती हैं। रिनियाँ पर सभी दबाव बनाए रखते हैं। माँ कहती है—उसी की कमाई न खा रही हो।

हाँ, बहुत बड़ा कमाऊ पूत है। और कोई कमाता है। और सब तो बैठे ही रहते हैं।—रिनियाँ बात को पलट देती है।

गुलो का बड़ा बेटा अर्जुन पंजाब चला गया। महीना भर हुआ होगा। यहाँ रिक्शा चलाता था। घर में दस-बीस रुपए देता था और बाकी पैसों का दारू पी जाता था। बाप, माँ, पत्नी कितना भी कहे, फिर भी दारू नहीं छोड़ता। अब पंजाब में किसी सरदार जी की दुकान में काम करता है। यहाँ गुलो के पास उसकी पत्नी कंदाहावाली और उसका तीन साल का बेटा सुजीत रहता है। सुजीत को चाय पीने की आदत लग चुकी है। सुबह-शाम दुकान पर आकर बोलता है—दादा, मुझे भी चाय दो।

गुलो की पतोहू (बहू) कंदाहावाली को कोई न कोई काम मिल जाता है। कभी मकई की निकौनी करने जाती है, तो कभी गरमा धान रोपने के लिए। दोपहर तक काम करती है, तो उसके तीस रुपए मिलते हैं। पूरे दिन काम करती है, तो साठ रुपए मिलते हैं। सुजीत से छिपकर जाना पड़ता है। यदि देख लेता है, तो पीछे पड़ जाता है। नहीं जाने देता है। एक दिन तो अपनी माँ के लिए वह जमीन पर लोट-लोटकर रोने लगा माइ री माइ! कहाँ चली गई री माइ! मैं बड़ा होऊँगा, तो तुम्हें कमा के खिलाऊँगा री माइ।

गुलो को उसकी बातें सुनकर आश्चर्य होता है। ये बातें इस लड़के ने कहाँ से सीखीं! फिर स्वयं ही कहता है—कलयुग का बच्चा है न!

रिनियाँ बार-बार थूक फेंकती है। पेट में कीड़ा हो गया है। स्कूल में दवाई दी गई थी। दवा खाने के बाद दो कीड़े शौच में गिरे थे। लगता है और भी कीड़े हैं। लड़की कहीं भी पच्च से थूक देती है। गुलो कहता है—चटोर कैसी है! आक-धतूर कुछ भी नहीं छोड़ती है। जो मिलता है टप से मुँह में डाल लेती है।

नए साल के दिन भी रिनियाँ ने जो मछली खाई, सब उल्टी कर दी थी। पहले से ही धमकी दे रही थी आलू-वालू की सब्जी बनी, तो मैं थाली फेंक दूँगी। मैं मांस खाऊँगी।

गुलो ने चुपचाप उसकी धमकी सुन ली थी। कहाँ से मांस लाएगा, यह सूझ नहीं रहा था। उसे खुद भी मांस खाए बहुत दिन हो गए थे। मकलू बड़ी मस्जिद के पास खस्सी काटता है। गुलो ने उसी को पकड़ा रे मकलू, क्या हम लोग मांस नहीं खाएँगे रे?

हाँ, क्यों नहीं खाइएगा।

पैसा है, जो खरीदूँगा? उसकी आँत ही दे दो न, जो पाँच-दस रुपए बोलोगे, दे दूँगा।

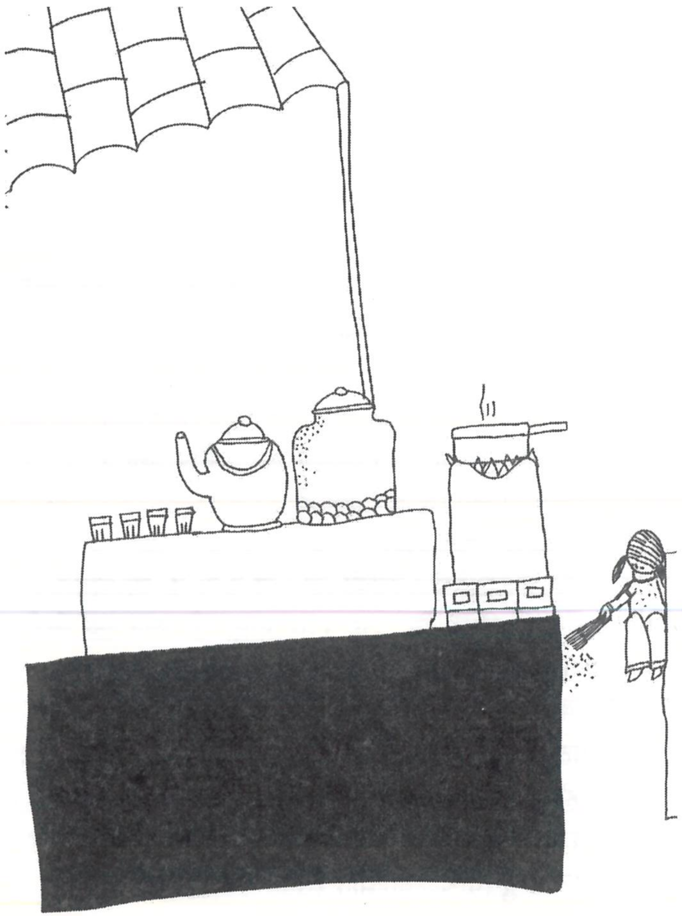
अच्छा, आइएगा।

लेकिन नए साल के दिन जब गुलो बड़ी मस्जिद के पास गया, तो मकलू का पता ही नहीं। गुलो हताश लौट आया। एक मुसहरनी मछली बेचने जा रही थी। गुलो ने उसे आवाज दी। मुंगरी मछली थी, लेकिन मरी हुई। फिर भी गुलो ने खरीद ली। मछली बनी तो, लेकिन कोई खा न सका। मछली दुर्गंध दे रही थी। रिनियाँ ने तो उल्टी ही कर दी।

सभी गुलो की फजीहत करने लगे—क्या कहाँ से खरीद लेते हैं, जो न खाने लायक, न पीने लायक।

गुलो की बगल में ही अनवर का कठघरा है। वह सुई देता है। एक सुई लगाने का दस रुपए लेता है। वह गुलो से बोलता है—इसे कीड़े मारने का एक कैप्सूल दीजिए, सब कीड़ा गिर जाएगा।

गुलो यह भी नहीं पूछता है कि कैप्सूल की कीमत कितनी है। चुपचाप सुन लेता है। पूछकर क्या करेगा! रिनियाँ भी नहीं कहती है कि खरीद दीजिए। उसे भी कोई परवाह नहीं है। बस पचपच थूकती रहती है।



गुलो की ससुराल बेला में है। बेला से गुलो की सलहज आई है, ननद से मिलने के लिए। अपनी भौजाई को देखते ही बेलावाली जार-बेजार रोने लगी   आज याद आई है! इस बूढ़े ने तो मुझे मार दिया। एक पैसे की भी दवा नहीं देता है।

सलहज गुलो की फजीहत करती है—इस गजपिये (गांजा पीनेवाला) ने मेरी ननद को मार डाला।

गुलो पहले बहुत गांजा पीता था। गांजा पीता और रिक्शा चलाता। गांजा पीते-पीते दमा की बीमारी हो गई। बीमार पड़ गया। शरीर से लाचार हो गया। रिक्शा चलाना छोड़ना पड़ा। फिर चाय की दुकान शुरू की, जो किसी तरह चल रही है।

गुलो भारी चिंता में है। निमंत्रण आया है। भांजे की शादी है। वहाँ जाना होगा। साड़ी, साया, ब्लाउज और दो सौ इक्यावन रुपए देने पड़ेंगे। ज्यादा नहीं, तो पाँच-छह सौ रुपए का खर्च है। कहाँ से लाएगा? इसी उधेड़बुन में पड़ा हुआ है।

दो दिनों से पानी बरस रहा है। जलावन एक भी नहीं है। प्लाइ मिल में पानी जमा हो गया है। लकड़ी के टुकड़े सब भींग गए हैं। वे भी चुनने लायक नहीं हैं। बारिश नहीं हुई रहती, तो रिनियाँ कहीं न कहीं से जलावन चुन ही लाती। गुलो घर के घुन लगे खूँटे को निकालकर चीरता है। आज उसी से खाना बनेगा।

दो दिनों से चाय की दुकान भी बंद है। दूधवाला लौट गया। जलावन ही नहीं था, तो दूध लेकर क्या होता।

छोटुआ के हफ्तेवाले रुपए और कुछ लोगों से उधार माँगकर गुलो ने कपड़े खरीदे। रिनियाँ और छोटुआ को साथ लिया तथा भांजे की शादी में शरीक होने सोनक चला गया। घर पर रह गई बेलावाली, कंदाहावाली और सुजीत। दादा के साथ जाने के लिए सुजीत बहुत रोया।

गुलो के चले जाने के बाद कंदाहावाली कहीं से जलावन ढूँढकर लाई। दूध लिया और फिर से चाय की दुकान शुरू कर दी। जो कंदाहावाली आठ बजे उठती थी, वह अब पाँच बजे ही उठती है। घर-आँगन साफ करती है, चाय बेचती है, खाना बनाती है और दिन मे गरमा धान रोपने चली जाती है। गुलो के चले जाने से बेलावाली को कष्ट हो गया है। दो

रात से बिना सब्जी के रोटी खानी पड़ रही है। कंदाहावाली सब्जी नहीं बनाती है। बेलावाली दिन भर पोते की देखभाल करती है। उसे बहला कर रखती है। कोई ग्राहक आ जाता है, तो उसे चाय बनाकर देती है। हाथ थरथराता रहता है। डर लगा रहता है कि कहीं चाय न गिर पड़े।

सोनक पहुँचते ही गुलो ने कहा–खबरदार! दारू पीकर कोई बारात नहीं जाएगा। दारू पीकर जाएगा, तो लड़ाई और मारपीट करेगा। सारी इज्जत-प्रतिष्ठा मिट्टी में मिला देगा। दारू पीना हो, तो उधर से लौट कर आए और फिर जितना पीना हो, पिए। कोई रोक-टोक नहीं।

बारात कहरा पहुँची रात दस बजे। बाजा तो था ही। लड़के डांस करने लगे। दरवाजा लगते-लगते बारह बज गए। जनबासा (जहाँ बारातियों को ठहराया जाता है) में डाला-दौरा, संदेश आदि रखे गए। गुलो ने वधू पक्षवाले एक व्यक्ति से कहा, समधी कौन हैं। उन्हें जल्दी भेजिए।

समधी आधा घंटा में आए। मुँह को गमछा से ढंके हुए। गुलो ने कहा, समधी जी, आपको पहचानूँगा कैसे, मुँह पर से गमछा तो हटाइए।

समधी ने गमछा हटा लिया। गुलो को समधी का मुँह हुक्के जैसा लगा। उसने तभी सिर पीट लिया। लड़की अच्छी नहीं होगी। गाँव के एक व्यक्ति ने कहा–बाप रे! लड़का तो राजकुमार जैसा है, लेकिन लड़की लड़के के योग्य नहीं है।

लेकिन अब तो कुछ नहीं किया जा सकता था। गुलो ने कहा–समधी, यह डाला-दौरा ले जाइए।

डाला-दौरा में चावल, चूड़ा, लड्डू, खाजा और केले थे। एक बर्तन दही था। सामान चला गया, तो गुलो ने लड़के को तिलक करने के लिए कहा। पुरोहित ने कहा–अब आप लोग लड़की को तिलक कीजिए।

गुलो को गुस्सा आ गया अरे आप ब्राह्मण हैं या चमार? पहले गौरी की पूजा होती है या शंकर की?

ये लोग तो कहते हैं कि लड़के का तिलक हो गया है।

तब लड़की का भी तिलक हो गया है–गुलो ने कहा।

लड़कीवाले ने तिलक का सब इंतजाम कर रखा था, सिर्फ बदमाशी कर रहा था। गुलो के थोड़ा तनते ही सभी सीधे हो गए। फिर लड़के और लड़की दोनों का तिलक हुआ। खाना-पीना हुआ। खाने में ताजा

रोहू मछली थी। सभी बारातियों को मछली का मूड़ा मिला। चार बजे सुबह में शादी संपन्न हुई। आठ बजे बारात विदा हुई, तो लड़कीवाले वधू की विदाई करने के लिए तैयार नहीं थे। कह रहे थे कि शाम में विदाई होगी। गुलो ने कहा, शाम में विदाई करेंगे, तो जाने के लिए गाड़ी की व्यवस्था आपको करनी होगी। पाँच रिश्तेदार भी रहेंगे, उनका भी स्वागत-सत्कार करना पड़ेगा। यदि आप इसके लिए तैयार हैं, तो क़ोई बात नहीं।

वधू पक्षवालों को यह भारी लगा। उन्होंने विदाई कर दी। नौ बजते-बजते बारात और दुल्हन सोनक पहुँच गए। दुल्हन को दूसरे के घर में रखना पड़ा। दिन में दुल्हन अपने घर में नहीं जा सकती थी। यही रिवाज था।

शाम में जब गुलो की बहन ने दुल्हन को देखा, तो गुलो को डाँटने लगी–रे, कैसी दुल्हन उठा लाया!

मुझे कुछ मत बोलो। जो देखने गया था और जिसने पसंद किया, उसे बोलो। मैंने जो रिश्ता तय किया था, वैसा आसपास के पाँच गाँव में एक भी नहीं है। देखने में उतनी ही सुंदर और काम करने में तो बिजली थी बिजली। लेकिन वह रिश्ता नहीं किया क्योंकि ग्यारह हजार रुपए ही दहेज मिल रहा है। इसने दिया इकतीस हजार। तुरंत दे दिया। और तुम्हारे बेटे ने तुरंत जेब में रख लिया। वहाँ मैं क्या कहता कि मुझे लड़की पसंद नहीं है। विवाह नहीं करेंगे? ऐसा कहता, तो कोई इज्जत बाकी रहती? मार भी खाता और विवाह भी करना पड़ता।

बहन चुप हो गई। जिसकी शादी हुई थी, वह भांजा अगले दिन मुँह लटकाए आगे में आकर खड़ा हो गया और बोला–मामा, लोग लड़की की निंदा करते हैं।

खबरदार! ऐसी जुबान मत निकालो। जिसका हाथ तुमने पकड़ लिया है, जिसे घर लाए हो, उससे बढ़कर और कोई नहीं। वही घर की लक्ष्मी है। उसे अच्छी तरह रखोगे, तभी घर सुधरेगा। दूसरों की बात सुनोगे, तो घर बर्बाद हो जाएगा। कहने दो, जिसे जो कहना है। उससे कुछ नहीं होता।–गुलो ने अपने भांजे को डाँटते हुए कहा। वह चुप हो गया।

अगले दिन गुलो अपने घर जाने के लिए तैयार हुआ। भांजा जिद करने लगा कि आज रुक जाइए। गुलो की बड़ी बेटी रुनियाँ भी आई

हुई थी। उसकी इच्छा थी कि रिनियाँ को अपने घर ले जाए। उसने रिनियाँ के कपड़े-सलवार-फ्राक-छिपाकर रख लिए। लेकिन रिनियाँ अपनी बहन की ससुराल नहीं जाना चाहती थी। रूनियाँ रोने लगी। रिनियाँ भी रोने लगी। दोनों बेटियों को रोते देख गुलो से भी नहीं रहा गया, वह भी रोने लगा।

रिनियाँ बोली, मैं नहीं जाऊँगी दीदी! लोग कहेंगे, पेट पोसने आई है। बाप बीमार हो गए हैं, बुरे दिन आ गए हैं, इसलिए न तू जाने के लिए कह रही है? नहीं जाऊँगी दीदी, नहीं जाऊँगी।

रिनियाँ इतना रोई कि उसकी आँखें सूज गईं। गुलो को हैरानी हुई कि यह लड़की सब बात कैसे समझ गई।

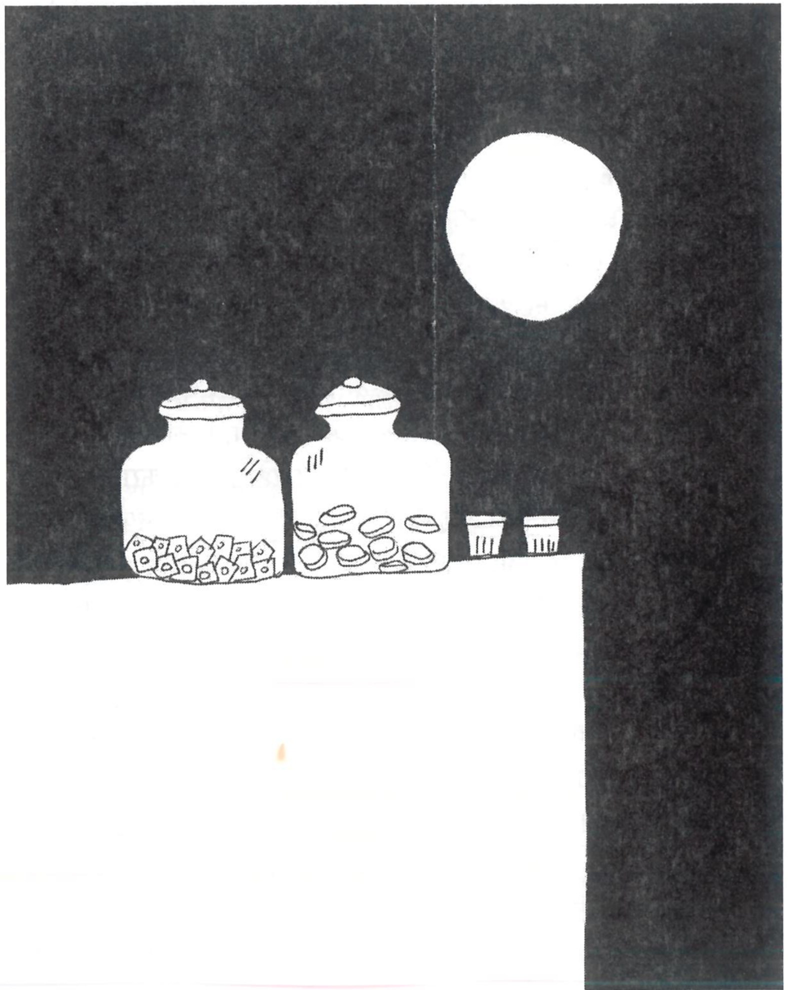
भांजे ने कहा, मामा, नहीं रुकिएगा, तो जाइए। मैं किसी दिन आऊँगा और रिनियाँ तथा छोटुआ को सुपौल में ही कपड़े खरीद दूँगा।

रिनियाँ सोनक से लौटी, तो दो-तीन दिनों तक झुमका पहने रही। बीस रुपए का था, लेकिन बिल्कुल चांदी जैसा लग रहा था। सलवार-फ्राक और झुमके में सजी रिनियाँ किसी शहजादी जैसी लग रही थी। माँ और भौजाई को रिनियाँ सोनक की कहानियाँ सुनाती रही। किसने क्या कहा, कौन रूठा, किसने झगड़ा किया। घर से सटे बाँसों के झुरमुट में रात को कोई सियार आकर भौंकने लगता। सारी बातें वह स्पष्ट करके सुनाती। जैसे किसी तीर्थ से लौटी हो। रिनियाँ के लिए सोनक किसी तीर्थ से कम नहीं था। उसने तो अब तक रेलगाड़ी भी नहीं देखी है।

इस हफ्ते छोटुआ पाँच दिन काम पर नहीं गया। मात्र एक सौ रुपए मिलेंगे। वह भी मिलेंगे या नहीं, कोई ठिकाना नहीं। विवाह में जाने से पहले उसने एडवांस लिया था। अगर वह काट लिया, तो कुछ भी नहीं मिलेगा।

घर का खर्च कंदाहावाली चलाती है। गरमा धान की रोपनी चल रही है। कंदाहावाली रोज रोपाई के लिए जाती है। उसी से घर का खर्च चलता है।

अर्जुन छह हजार रुपए कर्जा छोड़कर गया है। लोग तकादा करते हैं। अनवर के मोबाइल पर कंदाहावाली अपने पति को सारी बातें बताती है। अर्जुन ने कहा है कि चार-पाँच दिन में रुपए भेजेगा।



गुलो सुबह-शाम चाय बेचता है और दिन में खेत की देखभाल करता है। मलिक डॉक्टर के चार कट्ठे खेत में बटाई पर खेती करता है। खेत में अरहर और तीसी की फसल लगी है। घास काटनेवाली उसे उजाड़ देती है। देखभाल नहीं करेगा, तो खेत उजाड़ देगी। मेड़ पर कई आम के पेड़ हैं। खूब बौराए हुए। टिकुला (अमिया) आने पर उन पेड़ों की भी देखभाल करनी पड़ेगी।

गुलो के आँगन में जो नलकूप है, उसमें पानी के साथ रेत आती

है। फिल्टर फूट गया है। रिनियाँ बाल्टी में भर-भरकर पानी ढोती है। कभी ठकना के नलकूप से तो कभी इनरा गान्ही के नलकूप से। पानी ढोते-ढोते रिनियाँ की बाँहें दुखने लगी हैं। कभी-कभार तो लगता है, मानो बाँहें उखड़ जाएँगी। रिनियाँ गुस्सा करने लगी मैं नहीं लाऊँगी। घर में और कोई नहीं है? सिर्फ मैं ही हूँ?

रिनियाँ का इशारा छोटुआ और कंदाहावाली की तरफ है।

गुलो न छोटुआ को कह सकता है और न ही कंदाहावाली को। छोटुआ मर्द है और उसमें भी कमाऊ। और कंदाहावाली तो घर की इज्जत है। उसे कैसे कहेगा।

गुलो रिनियाँ को फुसलाता है—क्या होगा बेटा! कुछ दिन और ला दो। नलकूप ठीक हो जाएगा। जैसे ही पेंशन मिलेगी, मैं ठीक करवा दूँगा।

आप एक नंबर के झूठे हैं। कबसे कह रहे हैं ठीक करा देंगे, ठीक करा देंगे। चार महीने हो गए हैं, ठीक हो ही रहा है—रिनियाँ की बातें सुन गुलो स्तब्ध रह गया। रिनियाँ समझती है, वह कितना भी देह-हाथ पटकेगी, छोटुआ और भौजाई पानी नहीं लाएँगे। चाहे कितना भी बुरा लगे, पानी तो उसे ही लाना पड़ेगा।

गुलो सोच में पड़ गया। नलकूप उखाड़ने और गाड़ने में एक हजार रुपए लगेंगे। पाँच सौ रुपए फिल्टर में भी लग जाएँगे। नलकूप ठीक कराने का मतलब हुआ, डेढ़ हजार रुपए का खर्च। यह डेढ़ हजार रुपए वह कहाँ से लाएगा। पाँच महीने से पेंशन नहीं मिली है। दोनों पति-पत्नी को मिलाकर मिलेंगे मात्र दो हजार रुपए। दो हजार रुपए में वह क्या-क्या करेगा? छप्पर का फूस भी सड़ गया है। घर कई जगह से चूने (टपकने) लगा है। चैत-बैसाख तक अगर ठीक नहीं करा सका, तो फिर रहेगा कहाँ? गुलो को कुछ सूझ नहीं रहा है।

कल दूधवाले ने बड़ी फजीहत की थी। उसके चार सौ रुपए बकाया हैं। दूधवाले ने माँगा, तो गुलो ने भरोसा दिलाते हुए कहा, दे दूँगा, जरा ठहर जाओ। सब्र रखो। दे ही दूँगा। बेईमानी नहीं करूँगा। गुलो ने आज तक किसी का बकाया नहीं रखा है और न ही बेईमानी की है। जाओ न, आज का तो दे दिया न।

आप सब दिन ऐसे ही कहते हैं। देंगे नहीं, तो भैंसवाले को क्या दूँगा? वह मानेगा? नहीं दूँगा, तो क्या वह दूध देगा? अब नहीं मानूँगा। मुझे आज दीजिए, अभी दीजिए।

इतने लोगों ने बकाया रखा है, वह कुछ नहीं और मैंने रखा है, तो जुल्म हो गया। इतने दिन से दे रहा था न? कभी बेईमानी की? कह रहा हूँ, तो समझते क्यों नहीं हो! जाओ न, दूँगा ही न। गुलो ने किसी तरह उससे पिंड छुड़ाया था।

गुलो को एक ही उपाय सूझ रहा है। यदि अर्जुन दस हजार रुपए भेज दे, तो सब काम हो जाएगा। लेकिन वह भेजेगा? न्न! वह अपनी पत्नी को रुपए भेजेगा। चुपचाप। गुलो को रात-रात भर नींद नहीं आती है।

छोटुआ को हफ्ता मिला है। अभी ही लेकर आया है। तीन सौ रुपए। अरे, बस इतना ही?—गुलो उससे बहस करता है।

इतना ही दिया है।—छोटुआ रुआँसा होकर कह रहा है।

काम किया तूने साढ़े चार दिन और दिया तीन सौ रुपए सिर्फ! बोला नहीं उससे?

बोले तो। नहीं दिया, तो मैं क्या करूँगा? छोटुआ खीझकर कहता है।

अरे, ओवरटाइम का कुछ भी नहीं दिया?

पचास रुपए दिए।

नौ घंटे के मात्र पचास रुपए! साला दशरथबा खच्चर है! गुलो को मिल मलिक पर गुस्सा आता है।

लेकिन बेलावाली को अपने बेटे पर संदेह हुआ। दिया होगा कुछ और बोल कुछ रहा है। वह अनवर को सुनाकर कहती है—समझे कि, इस लड़के के मन में कपट है, कपट! यह हम लोगों का कुछ करेगा? न्न। करेगा तो बड़ा बेटा ही करेगा।

अच्छा ठहरो। मैं खुद जाऊँगा।—गुलो ने कहा।

ठहरने की क्या बात है। अभी जाइए न। नहीं तो ठिठुआ देगा।—रिनियाँ को बाप की ढिलाई पसंद नहीं है।

रिनियाँ खीजी हुई रहती है। उसे कभी फुर्सत नहीं मिलती है। कभी यह काम, तो कभी वह। वह चिंता में पड़ी उदास रहती है। स्कूल में परीक्षा है। प्रश्न पत्र के दस रुपए लगेंगे। गुलो के पास दस रुपए भी नहीं हैं कि वह देगा। रिनियाँ कभी पढ़ती ही नहीं है। परीक्षा में क्या लिखेगी?

वह सिर्फ पैसे के लिए स्कूल जाती है। पोशाक राशि और साइकिल के लिए।

प्लाइ मिल होली से पहले ही बंद हो गया। मशीन खराब हो गई है। ठीक होने में कितने दिन लगेंगे, उसका कोई ठिकाना नहीं। छोटुआ का रोजगार बंद हो गया है। अब वह दिन भर क्रिकेट खेलता है और रिनियाँ से लड़ाई-झगड़ा करता है।

गुलो चिंतित है। आगे फगुआ (होली) का पर्व है। हाथ पर एक भी पैसा नहीं है। कैसे होगा फगुआ? पतोहू के पास कुछ पैसे हैं, लेकिन वह निकालेगी तब न। अनवर को चाय देते हुए गुलो कहता है—अनवर भाई, फगुआ कैसे होगा? यदि पाव भर भी पोठी मछली हो जाती, तो बाल-बच्चे भात के साथ खा लेते।

अनवर कोई जवाब नहीं देता है। उसने पहले भी कई बार मदद की है। जाड़े में गुलो और बेलावाली, दोनों बारी-बारी से बीमार पड़ गए थे। अनवर ने रुपए दिए थे, दवाई दी थी, सुई लगाई थी। एक बार मछली और एक बार मांस खरीदकर दिया था। लेकिन गुलो लौटाने का नाम ही नहीं लेता है।

होली के दिन राजिन्दर डीलर मछली खरीद रहा था। एक मुसहरनी कठौती में रोहू और गरचुन्नी मछली लेकर बेचने आई थी। गुलो भी वहाँ खड़ा हो गया। राजिन्दर ने पूछा, गुलो, मछली लेनी है क्या?

भैया, लेता तो, मगर मेरे पास पैसे नहीं हैं।

राजिन्दर ने अपने लिए रोहू खरीदी और गुलो को गरचुन्नी मछली खरीद दी। आज राजिन्दर ने सुबह-सुबह ही दारू पी ली थी और इस समय मस्ती में था। वह कोटे की दुकान चलाता है। सभी उसे डीलर कहते हैं। खाने-पीने का बहुत ही शौकीन। दो-चार दिन पर मांस-मछली चाहिए, ताड़ी-दारू चाहिए। वह सिगरेट पीता है और पान भी खाता है। चाय की तो कोई बात ही नहीं। उसकी दूसरी घरवाली चाय की दुकान करती

है। सभी उसे इनरा गान्ही कहते हैं। उसका यह नाम कैसे पड़ा, किसी को मालूम नहीं है। वह एक छायादार पीपल के तले दुकान करती है। कोसी चौक पर सबसे पहले वही दुकान खोलती है। गरमी में चार बजे और जाड़े में पाँच बजे सुबह ही। उसकी दुकान जैसे ही खुलती है, वैसे ही मोहन यादव हाजिर। मोहन जब तक चाय पीता है, तब तक दो-तीन गंजेड़ी वहाँ पहुँच जाते हैं। मोहन गांजा देता है। कोई उसे हथेली पर रगड़ता है, कोई गुल तैयार करता है। मोहन पुनर्वास में रहता है और माल-मवेशी का व्यापार करता है।

उसके बाद राजेंदर मिस्त्री आता है। वह नलकूप गाड़ता है। उसके साथ भी दो चेले—चपाटी रहते हैं। उसके बाद देबो यादव आता है। चाय, गांजा और बातों की फुलझड़ी छूटती रहती है। इनरा गान्ही की दुकान गंजेड़ियों का अड्डा है। सुपौल, पुनर्वास, परसा, अमठो इतनी दूर के जितने भी गंजेड़ी हैं, सब जुटते हैं। इस इलाके के जितने भी रिक्शावाले, ठेलावाले हैं, सभी उसकी दुकान में चाय पीते हैं।

इनरा गान्ही के चार बेटे हैं। बड़ा डोमा किराने की दुकान करता है। उसकी दुकान पर एक न एक ग्राहक खड़ा ही रहता है। एक दिन गुलो ने रिनियाँ को चाय पत्ती की पुड़िया लाने के लिए कहा था। बिना पैसे के वह किसी से उधार लेना नहीं चाहती है। गुलो ने बहुत जोर दिया, तो वह चली गई। लेकिन डोमा ने उधार नहीं दिया। रिनियाँ लौट आई। गुलो को गुस्सा आ गया। देखो! तेरह रुपए का सौदा नहीं दिया! गुलो हनहनाते हुए गया और डोमा को फटकारने लगा, अरे, कभी तुमसे उधार लेकर पचाया भी है? मैं बेईमान हो गया क्या रे?

डोमा को डर था कि गुलो कहीं पैसा न लटका दे। पुड़िया देते हुए बोला—हे लीजिए। मगर शाम तक पैसे दे दीजिएगा।

इनरा गान्ही का दूसरा बेटा सुरेश पान की दुकान करता है। उसकी दुकान भी खूब चलती है। वह हर तरह का चार्जर रखे हुए है और एक मोबाइल को चार्ज करने का पाँच रुपए वसूलता है। पुनर्वास में बहुत लोगों के पास बिजली नहीं है। वे सभी सुरेश के पास ही मोबाइल चार्ज कराते

हैं। पति-बेटा दिल्ली-पंजाब खट रहा है। मोबाइल से ही सुख-दुख की बातें होती हैं।

तीसरा बेटा अमर मोबाइल रिचार्ज करता है। फिल्म और गाने डाउनलोड करता है। फोटो स्टेट करता है। फोटो खींचता है। उसकी दुकान में भी बहुत भीड़ रहती है।

चौथा बेटा ब्रजेश दवाई की दुकान करता है। एक लैपटॉप है। इंटरनेट कनेक्शन है। नेट सर्फिंग करते-करते उसे बहुत सी बीमारियों और उनके इलाज की जानकारी हो गई है। वह एक तरह से छोटा-मोटा डॉक्टर ही बन गया है। उसका कहना है—किसी डॉक्टर और मुझमें फर्क बस इतना है कि डॉक्टर के पास डिग्री है और मेरे पास डिग्री नहीं है।

गाँव-देहात के बहुत से मरीज उसके पास आते हैं। डॉक्टर की तरह वह भी दो-चार यंत्र रखता है। फीस पचास रुपए रखे हुए है। उसकी दी हुई दवाई काम करती है। दुख का निवारण हो जाता है। गुलो भी कई बार उससे दवा ले चुका है। गुलो का कहना है कि उसकी दवा महँगी होती है।

कंदाहावाली को नया रोजगार मिला है। मलहद के ताल में ताल मखाने की निकौनी का काम। नौ बजे से तीन बजे तक घुटने भर पानी में घुसकर मखाने के पौधे के आसपास की जलकुंभी, करमी, डोका और घोंघे को चुनकर बाहर निकालना पड़ता है। एक सौ रुपए दिहाड़ी मिलती है। कंदाहावाली सुबह-सुबह ही खाना बनाती है और कुछ खाकर निकौनी करने चली जाती है। लौटकर आने पर स्नान करती है। समूचे शरीर में सरसों का तेल लगाती है। सरसों तेल लगाने से खुजली नहीं होती है। आधे घंटे आराम करती है। फिर बगीचे की तरफ चली जाती है। खेत में कहीं-कहीं सरसों बोया गया है, उसे अलग करके उखाड़ती है। पाँच-सात दिन में तीसी के भी पौधे उखाड़ने लायक हो जाएँगे।

रिनियाँ मंसूबा बांधे हुई है कि आज डोके का मांस खाएगी। कंदाहावाली बोलकर गई है कि डोका लेकर आएगी। लेकिन डोका तो नहीं मिला, वह घोंघा लेकर लौटी है। घोंघा छोटा होता है, उसे बनाने में भारी झंझट है। और खाने में भी बेस्वाद। घोंघा देखकर रिनियाँ का मन छोटा हो गया। वह रूठ गई। अब वह न घोंघा बनाने के लिए राजी है

और न ही कोई और काम करने के लिए। उसकी माँ उसके बाबा बार-बार कहते हैं—पानी ला दो, झाड़ू लगा दो। लेकिन वह परवाह नहीं करती। वह गुमसुम बैठी हुई है। उसकी माँ ताना देती है—चटोर कैसी है! हर रोज मछली-मांस ही चाहिए।

रिनियाँ चुपचाप बैठी रहती है। रूखे बाल हवा में उड़ते रहते हैं। वह कभी बालों में तेल नहीं लगाती है। घर में तेल रहता ही नहीं है, जो लगाएगी।

सुखबा ने अपनी माइ को घर से निकाल दिया। वह सड़क पर कराह रही थी। बुढ़िया अस्सी साल की होगी। चला–फिरा नहीं जाता। कुछ दिन पहले बेंच की ठोकर लगने से गिर गई थी। जांघ में चोट लगी थी। तबसे जांघ में दर्द है। अनवर ने देखा, तो बुढ़िया को रिक्शे पर लादकर ले आया। दुकान के किनारे लिटा दिया। एक तरफ अनवर की दुकान है, दूसरी तरफ गुलो की दुकान है। बीच में बुढ़िया। बुढ़िया के पास दो सुजनी, एक कटोरा, एक गिलास, एक हाथवाला पंखा और एक लाठी है। अनवर ने दो लिट्टी लाकर बुढ़िया को दिया। चाय पिलाई। फिर ब्रजेश को बुलाया। ब्रजेश ने तीन सौ रुपए की सुई-दवाई दी। सबको पता है कि ब्रजेश किसी को उधार नहीं देता है। बुढ़िया पैसे बचाकर रखे हुई है। दो सौ रुपए महीना वृद्धा पेंशन मिलती है। अनवर ने बुढ़िया को सुई दी, दवाई खिलाई।

गुलो की पत्नी बेलावाली सबसे कहती फिर रही है—यहाँ बुढ़िया कैसे रहेगी? कौन इसकी सेवा करेगा? रात भर मच्छर काट खाएँगे।

अनवर को गुस्सा आ गया—आप कुछ मत करना। एक गिलास पानी भी नहीं देना।

बेलावाली चुप हो गई।

लालो चाय पीने दुकान पर आया, तो गुलो ने कहा, देखिए लालो भाई, इस बुढ़िया के पाँच बेटे हैं। पाँचों की कमाई अच्छी है। यह सामने में जो दुकान देख रहे हैं, वह इसके पोते उमेश की दुकान है। और इस बुढ़िया की दशा देखिए। इसका पति जब मर रहा था, तो उसने मुझसे कहा था—गुलो, देख लेना, यह औरत सड़क पर भटक कर मरेगी। इसकी बोली ही ऐसी है कि किसी के साथ इसकी पटरी नहीं बैठेगी। यह भटककर

मरेगी। वह दिन और आज का दिन देखते हैं, तो लगता है कि उस बूढ़े ने ठीक ही कहा था।

बुढ़िया कराह रही थी और हौ बाप-हौ बाप, हौ बाबू सब-हौ बाबू सब का जाप कर रही थी। रात में बुढ़िया को किसी ने खाने के लिए नहीं दिया। पंखे से मच्छर को भगाते और कराहते हुए रात बीती। एक तो गुलो खुद परेशानी में, दूसरे यह डर कि कहीं बुढ़िया दुकान के पास ही शौचादि करके गंदा न कर दे। लेकिन भूखे पेट शौच कहाँ से होता।

बोहनी हो गई, तो इनरा गान्ही ने चाय और बिस्कुट भिजवा दिए। चाय पीने के बाद बुढ़िया ने बीड़ी निकाली और गुलो को दिया। गुलो ने चुल्हे से बीड़ी को सुलगाया और बुढ़िया को पकड़ा दिया। बुढ़िया बीड़ी पीने लगी। एक-दो बार खाँसी भी हुई।

बुढ़िया रिश्ते में इनरा गान्ही की चचेरी सास लगेगी। उसे शर्म आती है कि लोग क्या कहेंगे। उसने दो लिट्टी भी भिजवा दी। बुढ़िया ने लिट्टी खाई और सामने दुकान पर बैठे पोते और उसकी बहू को टकटकी लगाकर देखती रही। वे लोग भी कभी-कभार तिरछी नजरों से देख लेते थे। दोपहर में उमेश खाना लेकर आया। बुढ़िया को दो दिनों के बाद भात-दाल खाने को मिला।

रात में बुढ़िया रास्ता देखती रही, लेकिन कोई खाना लेकर नहीं आया। भूखी रह गई। सुबह में इनरा गान्ही ने फिर चाय भिजवाई। दोपहर में अनवर दुकान पर आया, तो देखा बुढ़िया उकड़ूं होकर बैठी हुई है। अनवर समझ गया, बुढ़िया भूखी है। उसने बुढ़िया को स्नान कराया। टाट से होकर पानी आँगन में न चला जाए, इस डर से बेलावाली चिल्लाने लगी।

अनवर ने भी लोगों को दिखाकर कहा, देखिए तो, कौन सा पैखाना-पेशाब बहकर उसके आँगन में आ गया। मैं पूछता हूँ कि बुढ़िया ने खाया क्या है, जो शौच करेगी? दो बाल्टी पानी मैंने इसके शरीर पर डाल दिया, तो उसे लग रहा है कि आँगन में बाढ़ आ गई। एक गिलास पानी तो कोई देता ही नहीं है। कोई दो बाल्टी पानी से नहा दिया, तो उससे भी घिन होती है।

गुलो भुनभुनाया, बुढ़िया ने कोने में गंदा कर दिया है। बहुत दुर्गंध आ रही है।

अनवर ने बुढ़िया के लिए लिट्टी मंगवा दी। उसे रिक्शा पर बिठा कर कमेटी सेंटर पर भिजवा दिया।

अगले रोज इनरा गान्ही सुखबा के पास गई और बोली अब माइ कितने दिन जिएगी, जो उसे भीख माँगने के लिए छोड़ दिए हैं? लोग हँस रहे हैं। दुर-छी, दुर-छी कर रहे हैं। जरा भी लाज-शर्म है, तो उसे घर ले जाइए। भले खाना-पीना नहीं दीजिएगा, उसकी सेवा नहीं कीजिएगा। कम-से-कम उसे आँगन में मरने तो दीजिए।

सुखबा माइ को घर ले आया।

गुलो कई दिनों से हल की तलाश में है। हलवाला आज-कल कर रहा है। चास, समार और चौकी देने का ढाई सौ रुपए माँग रहा है। गुलो ने दो सौ रुपए कहा। सौ रुपए का मूँग का बीज खरीदकर रखा है। छोटुआ को आज पाँच सौ रुपए ही हफ्ते के मिले। एक सौ रुपए उसने खा-पीकर उड़ा दिए। गुलो को कुछ नहीं सूझ रहा है। पाँच सौ रुपए में से तीन सौ रुपए तो बीज और हल में ही खर्च हो जाएँगे। बच जाएँगे दो सौ रुपए। इससे एक हफ्ता कैसे कटेगा!

जलावन की बहुत कमी हो गई है। गुलो पैसे के कारण ही प्लाइ लाने नहीं जाता है। पतोहू ताल मखाने की निकौनी करने जाती है, तो एक बोझा करमी की लता ले आती है। लेकिन वह अभी सूखी नहीं है। बेलावाली बैठे-बैठे दबिया से उसे टुकड़े-टुकड़े करती है। सुजीत भी दादी से दबिया लेकर उसके टुकड़े करने लगता है। गुलो कहता है, यह लड़का मेरी तरह ही काम करने में बहुत माहिर होगा।

गुलो दबिया लेकर बगीचा चला जाता है। चह के पेड़ की कुछ टहनियाँ सूख गई हैं। गुलो पेड़ पर चढ़कर उन्हें काटने लगा। उतरते समय चह की खुट्टी तलवे में गड़ गई। गुलो फिसलकर पेड़ पर से उतरा। तलवे से खून निकलने लगा था। वह थोड़ी देर कसकर तलबे को दबाए रहा, फिर उठा और जलावन समेटकर घर चला आया। आज पहली बार उसे महसूस हुआ कि पेड़ पर चढ़ने की उसकी उम्र नहीं रही। अब वह कभी पेड़ पर नहीं चढ़ेगा। उसके बदन में दर्द होने लगा। बिना स्नान किए ही उसने

खाना खाया और सो गया। शाम चार बजे रिनियाँ और कंदाहावाली मूँग की बुवाई करने गईं।

कंदाहावाली से गुलो कभी पैसे नहीं माँगता है। चावल, गेहूँ, किरासन तेल कोटा से लाकर देता है। छोटुआ के पैसे से ही जितना जो हो पाता है, करता है। छोटुआवाला कितना पैसा किस मद में खर्च हुआ, वह सबको पता रहता है। लेकिन कंदाहावाली के पैसे का कोई अता-पता नहीं लगता है। वह हर हाट के दिन सस्ती सब्जियाँ खरीदती है। पिछले हाट के दिन उसने सुजीत के लिए दो पेंट और दो बनियान खरीदे। कल से गेहूँ काटने जाएगी। रिनियाँ भी जाएगी। बांध के भीतर लालगंज। करीब डेढ़ कोस की दूरी होगी। रिनियाँ काफी उत्साहित है। अब वह भी कमाएगी।

दोनों ननद-भौजाई एकदम सुबह ही चाय पीकर चल देती हैं। साथ में एक बोतल पानी है। कोसी चौक की ओर दस-बारह स्त्रियाँ गेहूँ काटने जा रही हैं।

आठ बजे तक गेहूँ की कटाई में बहुत मन लगता है। कटाई जल्दी होती भी है। उसके बाद धूप तीखी हो जाती है। पसीना छूटने लगता है। प्यास लगने लगती है। गेहूँ की डंठल सूखकर सख्त हो जाती है। पसीने से भीगी देह छिल जाती है। गेहूँ की नुकीली सूँग बाँह पर रगड़ खाती हुई लाल निशान छोड़ जाती है। खुजली होने लगती है। दस बजे कटाई बंद हो जाती है। सब घर लौट आती हैं।

कंदाहावाली और रिनियाँ मिलकर खाना बनाती हैं। नहाती-खाती हैं, थोड़ी देर आराम करती हैं और फिर हंसिया लेकर निकल जाती हैं। दोपहर में जाते वक्त चेहरे पर धूप लगती है। सूर्य डूबने तक कटाई चलती है। सभी मजदूर कटे हुए गेहूँ को खेत में उसी तरह छोड़कर चले आते हैं। दो-तीन दिनों के बाद बोझा बांधा जाएगा। दस में से नौ बोझा गृहस्थ के खलिहान में पहुँचाना पड़ेगा और एक बोझा अपनी मजदूरी होगा।

खेत में आइसक्रीम और दालबूट (नमकीन) बेचनेवाला फेरी लगाता रहता है। रिनियाँ गुलो से पाँच रुपए माँगती है—बाबा, पाँच रुपए दीजिए, आइसक्रीम खाऊँगी।

नहीं है रुपया। गुलो गुस्से में कहता है।

दीजिए न। रिनियाँ खुशामद करती है। नहीं दीजिएगा? रिनियाँ निराश होने लगती है।

गुलो को गुस्सा आता है—ऐ लड़की, देखेगी! बड़ी आई आइसक्रीम खानेवाली। आइसक्रीम खाएगी। इतनी मार मारूँगा कि सब आइसक्रीम निकल जाएगा।

रिनियाँ उदास हो गई। उसका मुरझाया चेहरा देखकर गुलो का वात्सल्य उमड़ आया। उसके पास दो ही रुपए थे, उसने दे दिए। रिनियाँ के चेहरे पर मुस्कराहट लौट आई।

मजदूर मजदूरीवाला बोझा भारी करके बांधता है—दो बोझे का एक बोझा। गृहस्थ भी कुछ नहीं कहते। आज-कल मजदूर मिलते नहीं हैं। गृहस्थ खुशामद करते रहते हैं—मेरे खेत में कटाई कर दो, तो मेरे खेत में कर दो। यदि गृहस्थ ने मजदूरों से कुछ कहा, तो गेहूँ खेत में ही पड़ा रह जाएगा।

मजदूरीवाला छह बोझा हो गया, तो गुलो ने रिक्शेवाले से एक रिक्शा माँगा और बांध पर चला गया। बांध के पश्चिम रिक्शा जा नहीं पाता है। कंदाहावाली और रिनियाँ बोझा ढोके ले आई। बांध के भीतर कहीं-कहीं रेत ही रेत है। रेत पर बोझा लेकर चला नहीं जाता। पैर ही नहीं उठते। वे दोनों किसी तरह बोझा ढोकर ले तो आईं, लेकिन थककर चूर हो गईं। सबने मिलकर बोझा रिक्शे पर लादा, डोरी से कसके बांधा और रिक्शे को खींचकर घर ले आए। उस दिन सभी भूखे सो गए। सभी इतने थके थे कि खाना बनाने की हिम्मत न हुई।

एक दिन कटाई करके लौटते-लौटते रात के आठ बज गए। गुलो बाजार गया था। रिनियाँ को बड़ी जोर की भूख लग आई। बाबा रहते, तो एक-दो रुपए माँगकर कुछ खरीदकर खा भी लेती। गुलो और उमेश की दुकानें आमने-सामने हैं। रिनियाँ ने देखा कि उमेश की बेटी दुकान पर अकेली है। उसके पास जाकर बोली अरी, थोड़ा पकौड़ा दो न, बहुत भूख लगी है।

उस लड़की ने पकौड़ा दे दिया। यह बात किसी ने उमेश को बता दी। उमेश गुस्से में आग-बबूला हो गया। बेटी को दो तमाचे जड़े और रिनियाँ की फजीहत करने लगा। माँ और भौजाई ने भी बड़ी फजीहत की। रिनियाँ को बहुत अफसोस हुआ। अपमान और दुख का अनुभव

करते हुए वह बिस्तर पर लेट गई। उसे नींद आ गई।

गुलो लौटा, तो देखा कि सभी बिस्तर पकड़े हुए हैं। खाना नहीं बना था। घर में भोजन की सामग्री नहीं थी। कंदाहावाली ने बताया कि दुकानदार के चार सौ रुपए उधार हो गए हैं। उसने और उधार नहीं दिया। गुलो दुकान गया। दुकानदार से बोला—छोटुआ को हफ्ता मिलेगा, तो सब उधार चुका देंगे। दुकानदार ने थोड़ा आटा और आलू उधार दिए।

रोटी-तरकारी बनी। सबने खाया। लेकिन रिनियाँ ने नहीं खाया। दिन में भी उसने रोटी का एक टुकड़ा खाया था। रोटी दुर्गंध देने लगी थी। बासी थी। धूप में खटते-खटते रिनियाँ की आँखें धंस गई थीं। चेहरा मुरझा गया था। चेहरे की चमक गायब हो गई थी।

मजदूरी में मिले गेहूँ को गुलो ने थ्रेसर में तैयार करवाया। तीन मन हुआ। छह सौ रुपए की भूसी बेची। गेहूँ खाने के लिए रख लिया। भूसीवाला रुपया कंदाहावाली को दे दिया। कटाई खत्म हो गई थी। बेरोजगारी हो गई थी। कंदाहावाली अब देर तक सोती रहती है। उसका बेटा सुजीत रोज अनवर से पैसा माँगता है—रुपया दीजिए। और अनवर एक रुपए का सिक्का निकालकर देता है। सुजीत ने यह आदत पकड़ ली है। किसी से समोसे माँग लेता है, तो किसी से टॉफी, तो किसी से कुछ और।

नलकूप ठीक नहीं हुआ है। दूसरे के नलकूप से पानी लाने की खातिर रिनियाँ और कंदाहावाली में झगड़ा होता रहता है। दुकान की दीवार धंस गई है। दुकान में यदि कोई ग्राहक बैठा रहता है, तो उसे ऊपर से आँगन का दृश्य दिखाई देता है। गुलो को बहुत बुरा लगता है। सोचता है टिन की दीवार लगा दे। तेलवाला टिन बीस रुपए में देता है। तीन सौ रुपए में टिन की दीवार हो जाएगी। सबसे सस्ता यही होगा। खुद ही ठोककर दीवार बना लेगा। नलकूप ठीक कराना उसके वश की बात नहीं है। अर्जुन पैसा भेजेगा, तभी हो पाएगा। लेकिन वह भेजता ही नहीं है।

गुलो से नरेशबा ने कहा कि रंजीता रंजन से एक हजार रुपए दिलवा देंगे। नरेशबा आजकल कांग्रेसी हो गया है। गुलो के परिवार में छह वोट हैं। यह बात नरेशबा को पता है। उसने कहा है कि मंगलवार को एक हजार रुपए दे देगा।

गुलो इंतजार करने लगा। दो-तीन दिन नरेशबा दिखा भी। रिक्शे

पर रंजीता का प्रचार कर रहा था। फिर पता नहीं कहाँ चला गया।

एक दिन फुलबा आया। उसने कहा, गुलो भाई, आज शाम में हरेराम के दरवाजे पर मीटिंग है। चले आइएगा। इस बार मोदी को जिताना है।

गुलो ने कहा, मीटिंग-फीटिंग से मुझे क्या? तुम्हें नोटों की गड्डी मिली होगी, तुम जाओ मीटिंग करो।

एक दिन कम्युनिस्ट पार्टीवाले ने बुलाया। गुलो ने टाल दिया।

गुलो ने अनवर से पूछा, भाई, वोट किसे दें?

अनवर थोड़ी देर चुप रहा। बोलने से पहले अगल-बगल देखा, फिर बोला—देखिए, सभी पार्टी एक जैसी है। लेकिन रंजीता रंजन ने लोगों की सेवा की है। बाढ़ में नाव पर जाकर लोगों को धोती-साड़ी बाँटती रही। जाड़े में कंबल दिए। गरीबों की सुध लेनेवाली एकमात्र वही है। उसे ही दीजिए।

कंदाहावाला कठौती में मिट्टी भरकर ढो रही है। चूल्हा बनाएगी। शाम हो गई है। रिनियाँ झाड़ू लगा रही है। रिनियाँ और कंदाहावाली में रोज खटपट होता रहता है। छोटी-छोटी बातों के लिए। पानी तो कई दिनों से गुलो ही ला रहा है। फिर भी दोनों में कहासुनी हो ही जाती है। गुलो इस सबसे परेशान हो गया है। सोच रहा है, रिनियाँ को बड़ी बेटी रुनियाँ के पास भेज दे। न यहाँ रहेगी, न झगड़ा होगा। पतोहू को कैसे कहेगा, तुम अपने मायके चली जाओ। बेटी को ही हटाना पड़ेगा।

सुजीत पकौड़ा माँग रहा है। गुलो उसे लेकर ठकना की दुकान पर गया। पकौड़े दिलवाए। सुजीत खाने लगा। जैसे ही उसने पकौड़ा मुँह में लिया कि चिल्लाने लगा। मिर्ची बड़ी तेज लगी। गुलो ने उसे पानी पिलाया और माँ के पास आँगन भेज दिया। कंदाहावाली गुस्से में थी। रिनियाँ से कहा-सुनी हुई थी। सुजीत रोता-रोता गया और माँ की साड़ी में लटक गया। माँ ने सारा गुस्सा उसी पर निकाल दिया। उसे बहुत मारा।

सास ने कहा, मिर्गी उठ गई है क्या!

हाँ, मिर्गी उठ गई है। मेरा बेटा है, मैं मारूँगी। कंदाहावाली ने सुजीत को तीन-चार लात और जमा दी। लड़का औंधे मुँह गिरा।

रिनियाँ बोली, यह औरत पागल हो गई है।

हे, ज्यादा टपटप मत बोलो। मुँह बंद रखो-कंदाहावाली ने डाँट लगाई।

बोलूँगी, तो क्या कर लोगी? बड़ी आई है बेटावाली। सिर्फ पैदा कर दिया, तो बेटावाली बन गई। दिन-दिन भर तुम ही रखती हो? गूंह-मूत, नेटा-पोटा तुम ही करती हो?—रिनियाँ भी चुप रहनेवाली कहाँ थी।

ज्यादा लबर-लबर मत करो, नहीं तो जी खींच लूँगी।

खींचो तो! कहती हुई रिनियाँ तेजी से भौजाई के पास पहुँच गई। कंदाहावाली ने तड़ाक तमाचा जड़ दिया। रिनियाँ ने दाँत काटने की कोशिश की। कंदाहावाली ने एक हाथ से उसके बाल पकड़े और दूसरे हाथ से उसे धक्का दे दिया। रिनियाँ धड़ाम से ओसारे के नीचे गिर गई।

बेलावाली टुकुर-टुकुर देख रही थी, वह बोली, गे माइ गे माइ, देखो हो, लोग सब।

आँगन में रिनियाँ पड़ी हुई रो रही थी। छोटुआ को रहा नहीं गया, बोला, मारो इस औरत को।

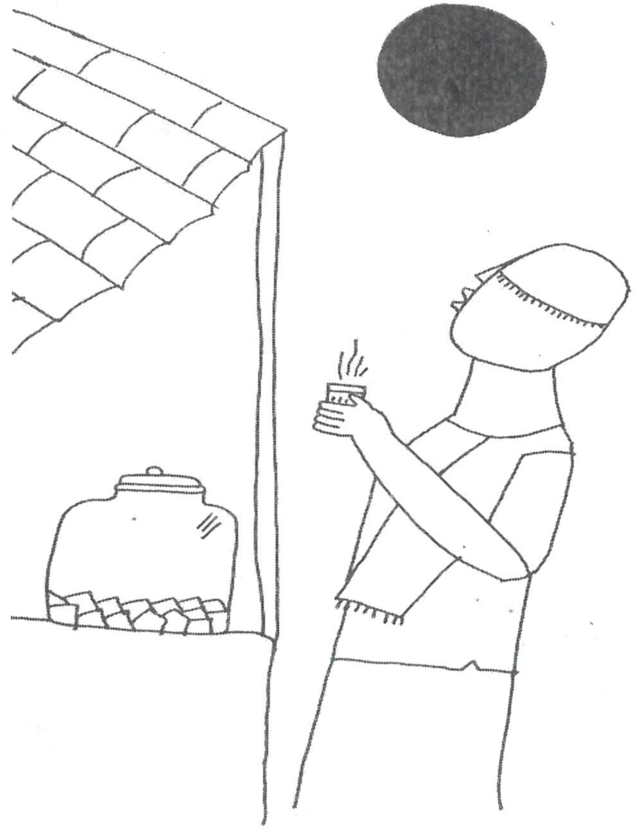
मार के देखो तो!

छोटुआ ने चप्पल निकाली और निशाना साधकर कंदाहावाली की तरफ फेंकी। उसे चप्पल लग गई। कंदाहावाली ने दौड़कर छोटुआ को पकड़ा और उसी चप्पल से उसे पीटने लगी।

गुलो पहुँचा तो देखा आँगन में महाभारत मचा हुआ है। वह छोटुआ और रिनियाँ, दोनों को पकड़ कर दुकान पर ले आया। सुजीत को दादी सँभाले हुई थी। कंदाहावाली ने रस्सी ढूँढी, फंदा बनाया और अपनी गर्दन में फँसा लिया।

बेलावाली चिल्लाने लगी—बाप रे बाप, यह औरत फाँसी लगा लेगी।

गुलो दौड़ा। आँगन पहुँचा, तो देखा कंदाहावाली किवाड़ बंद कर रही थी। वह कूदकर ओसारे पर पहुँचा और किवाड़ को धक्का दे दिया। फिर पतोहू की बाँह पकड़कर बाहर निकाला और बोला—फाँसी ही लगानी है तो अपने मायके चली जाओ। वहीं लगा लेना। नहीं तो घरवाले को फोन करो, अपने पास ही रखेगा। हम लोगों पर लांछन मत लगाओ। मैं जितना करता हूँ, उतना कोई भी ससुर किसी पतोहू के लिए नहीं करता होगा। क्या नहीं करता हूँ। झाड़ू लगाता हूँ, बर्तन माँज देता हूँ, हाँफ-हाँफ कर भी पानी ला ही देता हूँ। अब क्या करूँ? बोलते-बोलते गुलो का दम फूलने लगा। लौटकर दुकान पर चला आया।



किसी ने खाया-पिया नहीं। शाम होते ही सबने बिस्तर पकड़ लिए। लेकिन गुलो को नींद नहीं आई। बेलावाली भी जगी हुई ही थी। उसे लग रह था कि सभी भूखे सो गए हैं, इतनी बड़ी रात कैसे कटेगी!

चारों तरफ निस्तब्धता। बेलावाली उठी। जलावन लाकर चूल्हे के पास रखा। जग लेकर ठकना के नकलूप से पानी ले आई। आटा गूँधा हो गया, तो कंदाहावाली को जगाने लगी दुल्हिन, उठो। रोटी पका दो। सभी भूखे हैं। आटा गूँधकर रख दिया है। जलावन भी चुल्हे के पास है। उठो-उठो। अब भी रात बहुत बाकी है। हाय, हाय! सब खाली पेट ही हैं। पका दो।

कंदाहावाली जगी हुई ही थी। भूख से उसे भी नींद नहीं आ रही थी। उठी, रोटी बनाई, और जाकर बिस्तर पर लेट गई।

बेलावाली ने नमक-मिर्च की चटनी बनाई और सबको जगाने लगी। गुलो ने एक ही रोटी खाई। रिनियाँ और छोटुआ से भी बिना तरकारी के रोटी खाई नहीं गई। बहुत कहा, तो कंदाहावाली ने खाया। बुढ़िया ने भी थोड़ा सा खाया। सुजीत नहीं जगा।

अगले दिन कंदाहावाली ने अर्जुन को फोन लगाकर कहा—तुम्हारे भाई-बहन, माइ-बाप सबने मिलकर मुझे पीटा।

अर्जुन ने पूछा—मारा क्यों? कुछ किया होगा, तभी तो मारा?

हाँ, रिनियाँ को डांटा था।

क्या चाहती हो?

मुझे पाँच हजार रुपए चाहिए। नैहर चली जाऊँगी।

ठीक है, रखो।

काम का समय था। अर्जुन ने ज्यादा बात नहीं की।

तीसरे दिन कंदाहावाली का भाई रुपए लेकर पहुँच गया।

सबसे पहले कंदाहावाली ने किराना दुकान का कर्जा चुकाया। सत्यनारायण के आठ सौ रुपए हो गए थे। ग्यारह सौ रुपए अर्जुनवाला कर्जा चुकाया। बाजार गई। आठ सौ रुपए में चदरावाला ड्राम खरीदा। मजदूरीवाला तीन मन गेहूँ उसमें डाला और ऊपर-नीचे दोनों मुँह में ताला लगाया। फिर नैहर चली गई। सहरसा में कपड़े-वपड़े खरीदेगी, संदेश लेगी।

जाते वक्त गुलो ने कहा—दुल्हिन! यह तो नहीं सोचा कि चली जाऊँगी, तो बुढ़वा-बुढ़िया कैसे रहेंगे? ठीक है। नहीं रहोगी, तो जाओ। कोई बात नहीं। हम लोगों का भी गुजर हो ही जाएगा। भगवान पार लगाएँगे। लेकिन नैहर जाकर यह कलंक मत लगाना कि बुढ़वा-बुढ़िया ने मारा है। यदि झूठमूठ का कलंक लगाओगी, तो सुन लो-हम दोनों जब मर जाएँगे, तभी यहाँ कदम रखना। हमारे जीते-जी मत आना।

गुलो को लगा, जैसे वह रोने लगेगा।

कंदाहावाली और सुजीत के चले जाने से घर-आँगन सूना लगने लगा।

बेलावाली ने एक सूप गेहूँ छिपाकर रख लिया था। घर में एक भी

दाना नहीं था। बाल-बच्चों को क्या खाने के लिए देती, इसलिए छिपाकर रख लिया था। वह औरत ऐसी मतलबी निकली कि उसने रिनियाँ की मजदूरी भी रख ली। भूसीवाला छह सौ रुपए भी लेकर चली गई। बेलावाली वही गेहूँ फटक रही है। आज मिल में पिसाएगी।

गुलो फिर चिंता में है। उसके दोनों घर हिल गए हैं। खंभे सड़ गए हैं। छप्पर को टेकनेवाला आधार टूट गया है। दुकान की दीवार पहले से ही टूटी है। आँगन एकदम सपट हो गया है। नलकूप इतने दिनों से खराब है कि वहाँ की मिट्टी भी सूख कर पत्थर सी हो गई है।

गुलो के पिछवाड़े में कदंब के दो पेड़ हैं। अनवर सलाह देता है—गुलो, एक पेड़ बेच लीजिए। चार-पाँच हजार में बिक ही जाएगा। उसी से घर और नलकूप दोनों दुरुस्त करा लीजिएगा।

गुलो कहता है—अनवर भाई, ये दोनों पेड़ मैंने रिनियाँ की शादी के लिए रखे हैं।

अनवर हतप्रभ रह जाता है।

गुलो सुबह-शाम बगीचे की तरफ जाने लगा है। घास काटनेवाली बहुत उपद्रव करती है। नहीं जाएगा, तो एक भी मूँग का दाना नहीं होने देगी। बगीचे के पेड़ में कहीं-कहीं टिकोले बचे हुए हैं। आँधी में बहुत सारे टिकोले गिर गए। देखभाल तो करनी ही पड़ेगी। देखभाल नहीं करेगा, तो जो भी बचा है, वह भी कोई तोड़कर ले जाएगा।

बगीचे में बाँस के तीन झुरमुट हैं। गुलो ने अपने गृहस्थ से कहा, मालिक, घर टूट गया है। दो-तीन बाँस देते, तो खंभे लगा देता।

गृहस्थ उदार था, बोला, जाओ, काट लेना।

गुलो अब दोपहर में भी बगीचे में जाने लगा है। तीन बाँस काटकर, उसे छीलकर खंभा बनाया और बाकी हिस्से का बत्ती चीर लिया। अभी और बाँस काटेगा। मालिक देखने थोड़े ही आएँगे! मंजूरी दे दी, तो हो गया। ज्यादा ही काट लेगा।

दूसरे दिन दबिया की नोक से गुलो ने एक हड़ौथ बाँस काटा, खूब अच्छा और मोटा। बाँस ऐसे झुरमुट में फंसा था कि दबिया चलाने में मुश्किल हो रही थी। नोक से काटने पर बाँस फट गया और उसकी फुनगी तीन हाथ नीचे झुकी। उसकी जड़ को खींचते-खींचते गुलो परेशान हो उठा।

झुरमुट से बाँस नहीं निकला। अचानक आँधी आ गई। गुलो घर लौट आया। आँधी तेज थी। रसोई घर के छप्पर की सारी फूस उड़ गई। अब धूप और बरसात में कैसे खाना बनेगा!

आँधी रुकने के बाद छोटुआ पन्नी (पॉलीथीन) में भरकर टिकोले ले आया। गुलो के तलवे का गुस्सा सिर चढ़ आया   साले, काम छोड़कर टिकोले चुनते फिर रहे हो।

आँधी में सब काम बंद हो गया।

अब भी आँधी है ही रे हरामी? जाओ, जल्दी जाओ। कहना शौच करने गया था।

छोटुआ ने कोई जवाब नहीं दिया। वहाँ से निकल गया। बिजला की बेटी का आज कुमरम है। छोटुआ उसी के घर चला गया और वहाँ खेलने लगा। रिनियाँ ने देख लिया। आकर बाबा से बोला, छोटुआ खेल रहा है। काम पर नहीं गया।

गुलो को गुस्सा आया। बोला—आने दो। आज साले को बाँध के पीटूँगा।

शाम में छोटुआ घर लौटा, तो गुलो ने उसकी कलाई पकड़ी। खींचकर दुकान में ले आया और बिचले खंभे से बाँध दिया। उसके बाद दे थप्पड़।

छोटुआ का मुँह लाल हो गया। गुलो थप्पड़ मारता और पूछता—बोलो, फिर काम छोड़ोगे?

अब कभी काम नहीं छोड़ेंगे बाबू। छोटुआ की आँखों से टप-टप आँसू गिरने लगे।

बेलावाली ने गुलो की बाँह पकड़कर उसे हटाया।

छोटुआ खंभे में बंधा ही रह गया। वे लोग जैसे ही इधर-उधर हुए कि छोटुआ ने दाँत से रस्सी काटी और भाग गया। देर रात तक बिजला के घर पर ही रहा। लेकिन किसी ने खाने के लिए नहीं पूछा। चुपचाप घर आया और बिस्तर पर लेट गया। बेलावाली जगी हुई थी। उसने उठकर थाली में रोटी और तरकारी परोस कर खाने को दिया। छोटुआ भूखा था, उसने चार रोटियाँ खाईं।

अगले दिन भी उसने दोपहर तक ही काम किया और बिजला के घर चला गया।

गुलो ने पूछा, काम पर क्यों नहीं गया? तो उसने जवाब दिया, बिजला भैया ने कहा, थोड़ी मदद कर दो। गुलो चुप रह गया। विवाह-दान सामाजिक काम है।

बेलावाली को लगता था कि किसी ने जादू-टोना कर दिया है। किसी की नजर लग गई है। किसी डायन ने मंतर चला दिया है। नहीं तो इतनी दवा खाई, कहाँ ठीक हो रही हूँ। बुढ़वा भी खों-खों करता ही है। सब दिन कुछ न कुछ होता ही रहता है। आज यह, तो कल वह। उसने भी कितनी दवाएँ खाईं, लेकिन ठीक न हुआ। बेटी भी दुबली होती जा रही है। कभी दस्त होता है, तो कभी उल्टी, कभी चक्कर आते हैं। छोटुआ की तो मति ही मारी गई है। काम पर जाता है और भागकर चला आता है।

एक बाबाजी ने बताया, तुम्हारे घर पर किसी ने श्मशान की राख छींट दी है, इसलिए ऐसा होता है। मैं जंतर बनाकर दूँगा, तो सब ठीक हो जाएगा।

बेलावाली ने सबके लिए जंतर बनवाया। खुद भी पहना। दस दिन बीत गए। बेलावाली ने गुलो से कहा, जंतर से कहाँ कोई फायदा हुआ!

गुलो भड़क गया   मादरचोद। तुम्हें कुछ समझ में आता है। कोई कुछ कह दिया कि उसके पीछे दौड़े। यह टोना-टोटका फालतू है। इस सब से कुछ होनेवाला नहीं है।

बेलावाली का चेहरा उतर गया। वह चुप हो गई।

किसी ने बेलावाली से कह दिया   तुम्हारे घर के गुसाईं ही बिगड़े हुए हैं। उनसे डाली लगाकर गुहार करो।

बेलावाली के घर में कालीबंदी की पूजा होती है। उस दिन से वह खूब जतन से गुसाईं घर को लीपने-पोतने लगी। रोज फूल चढ़ाने लगी। धूप देने लगी। बिना पूजा-पाठ के पानी भी न पीती। लेकिन इस सबसे उसे संतोष नहीं होता। बार-बार सोचती भगैत करा लेती हूँ। गुसाईं से फूलहास करा लूँ। उसने भगत से बात की। एक निश्चित दिन भगैत की शुरुआत हुई। पान-फूल और प्रसाद चढ़ाया गया। भगत गुसाईं की पिंडी

के पास बैठा। भगैत गानेवाले ने गाने की शुरुआत की।

काली केर आँगन
अड़हुल केर गछिया रे
फल-फूल लुधकल जाए...

(काली के आँगन में अड़हूल फूल के पौधे हैं, जिसमें फल-फूल खूब आए हैं... ।)

भगत पर काली सवार हो गई। भाव आते ही भगत झूलने लगा अरे हो, अब याद आई है।

दोहाइ काली माता की। गलती माफ हो मइया। सेवक पर बहुत विपत्ति पड़ी है। बचाओगी नहीं, तो कौन सेवा करेगा-भगतिये ने जवाब दिया।

हौ-हौ! लो। भगत ने एक फूल उठाया लो। जाओ। अब कुश का कलेप भी नहीं लगेगा। सब ठीक हो जाएगा। लो। बेलावाली ने आँचल फैलाकर फूल लिया। फूल देकर गोसाईं अंतर्धान हो गए। बेलावाली अब निश्चिंत हो गई।

छोटुआ ने मालिक से एडवांस (अग्रिम वेतन) माँगा मलिक, बारह सौ रुपए दीजिए। नलकूप ठीक करवाऊँगा। दो हफ्ते पैसे नहीं दीजिएगा। काट लीजिएगा। नलकूप के बिना बहुत दिक्कत होती है।

दो दिन ठहरो। अभी तंगी है। मालिक ने भरोसा दिया। छोटुआ बहुत खुश हुआ। घर जाकर माइ-बाबा को सूचना दी। उम्मीद में उन दोनों की आँखें भी चमक उठीं। लेकिन रिनियाँ को संदेह हुआ। बोली—देगा थोड़े ही। इस लड़के को वैसे ही कुछ कह दिया होगा। दशरथबा एक नंबर का ठग है।

तुम्हीं जानती हो, नहीं देगा? देखना, उसका बाप देगा। छोटुआ ने रिनियाँ की बात काट दी।

हफ्ते का पैसा तो देता ही नहीं था। काम करते थे तुम छह दिन, तो पैसे देता था चार दिनों का। वह तो मैंने ही फटकारा, झगड़ा किया, तब दिया। बहुत सस्ता है! इसे एडवांस देता है! रिनियाँ की बात से छोटुआ के मन में संदेह पैदा हो गया। उसने बाबा से पूछा, हाँ हौ बाबा! नहीं देगा?

देखो न, दो दिन का नाम कहा है न? दो दिन के बाद फिर से माँगना। गुलो ने उसका हौसला बढ़ाया।

अरी, तुम ऐसे उदास क्यों रहा करती हो? बेलावाली ने रिनियाँ से पूछा।

रिनियाँ ने कोई जवाब नहीं दिया। उदास बैठी रही। उसकी तबीयत ठीक नहीं है। सर्दी हो गई है। देह तप रही है। चार बज रहे होंगे। मास्टरनी बगीचे में पहुँच गई होगी। रिनियाँ जाएगी और एक टोकरी घास काटकर देगी, तो वह दस रुपए देगी। उसका जाने का मन नहीं कर रहा है। लेकिन नहीं जाएगी, तो दस रुपए छूट जाएँगे। रिनियाँ टोकरी और खुरपी लेकर बगीचे चली गई। शाम में लौटी तो बुखार से देह तप रही थी।

गुलो अनवर के पास गया और बोला—भाई, लड़की की देह से आग बरस रही है। उसकी तबीयत ठीक नहीं है। क्या करूँ, कुछ सूझ नहीं रहा है।

अनवर ने बुखार उतारनेवाली टिकिया दी और बोला—कल अस्पताल ले जाइए। तीन ही रुपए लगेंगे। डॉक्टर देख लेगा और दवाई भी देगा।

गुलो ने वही किया।

दशरथ ने जो समय माँगा था, वह पूरा हो गया। एडवांस देगा। छोटुआ आज सबसे पहले पहुँच गया। मिल में दिन भर काम करता रहा। दिन जैसे ही ढलने लगा, छोटुआ संवाद पर संवाद भेजने लगा। घर के आसपास का जो कोई प्लाई खरीदने जाता, सबसे कहता बाबा से कहिएगा, आकर रुपए ले जाएँगे।

गुलो का मन मान नहीं रहा था। फिर भी गया। जाकर दशरथ के सामने खड़ा हुआ। दशरथ हिसाब-किताब कर रहा था। बहुत देर हो गई। गुलो बोला—मालिक, छोटुआ को एडवांस के लिए बोला था?

आप जाइए, मैं उसे दे दूँगा।

गुलो ने मन ही मन दशरथ को गाली दी। साला टाल रहा है। वह लौट आया। लेकिन छोटुआ का रास्ता देखता रहा।

छोटुआ आठ बजे रात में आया। एक हजार रुपए लेकर। घर में जैसे सनसनी दौड़ गई। रात में रिनियाँ ने सपना देखा। वह अपने नलकूप से पानी भर रही है।

लेकिन रुपया घर में कलह की जड़ बन गया। सबके विचार अलग-अलग थे। गुलो और रिनियाँ का विचार था कि नलकूप ठीक कराया जाए। बेलावाली कह रही थी—पहले घर ठीक करा लो। छोटुआ का शौक विचित्र ही था। अब वह साइकिल लेगा। उमेश एक पुरानी साइकिल बेच रहा था। उसकी कीमत रखी थी एक हजार रुपए। छोटुआ को पता लग गया, बस उसने जिद ठान ली कि साइकिल लेगा।

रिनियाँ ने कहा—वह साइकिल लेगा, तो मैं भी सलवार-फ्राक और चप्पल लूँगी। मेरे पोशाकवाले पाँच सौ रुपए आपने खा लिए थे।

ज्यादा लबलब मत करो। यह मेरा पैसा है। मैं साइकिल लूँगा। तुम्हें जो लेना है, कमा कर लो। छोटुआ ने कहा।

एह बहुत बड़ा कमासुत! पैसावाला हुआ है। मेरे पैसे को चाटा था क्यों?

देखेगी?

क्या देखूँगी रे?

बाबा! मैं साइकिल लूँगा। मेरे पैसों से कोई दूसरा काम हुआ, तो मैं काम छोड़कर कहीं और चला जाऊँगा।

गुलो और बेलावाली ने कितना समझाया कि साइकिल से ज्यादा जरूरी घर है, नलकूप है, लेकिन छोटुआ अपनी जिद पर अड़ा था।

एक साल पहले अर्जुनमा पंजाब से एक पुरानी साइकिल लेकर आया था। उसे उसने डेढ़ सौ रुपए में बेचा। बेचकर ठर्रा पी गया। छोटुआ उसी दिन से कह रहा था—बाबा, मैं भी एक साइकिल खरीदूँगा। खरीदकर भैया को दिखा दूँगा।

सो आज उसने साइकिल खरीद ली। नौ सौ रुपए में। उमेश की अपनी साइकिल नहीं थी। परसा का एक लड़का उसकी दुकान पर छोड़कर चला गया था। संभवतः दारू के नशे में था। उमेश ने उस साइकिल को गुलो के आँगन में रख दिया। बताया कि उसके रिश्तेदार का है। शाम को साइकिलवाला लड़का आया, तो उसे कह दिया कि मैं नहीं जानता हूँ। दुकान पर लोग आते-जाते रहते हैं। कोई लेकर चला गया होगा।

साइकिलवाला लौट गया था।

पंद्रह दिन हो गए, तो गुलो ने उमेश से पूछा—अरे बात क्या है? किसकी साइकिल है?

उमेश ने सारी बातें बताईं और साइकिल लेकर चला गया। वही साइकिल छोटुआ ने खरीदी है।

गुलो कहता है—गलत पैसा गलत जगह पर जाता है। देखिए, आज ही उसने साइकिल बेची और आज ही उसके बेटे का हाथ टूट गया। कर्म का फल मिल गया।

गुलो ने दुकान की टूटी हुई टाट (घास-फूस से बनी दीवार) को उजाड़ दिया है। दूसरी बनाने लगा है। नीचे में बाँस की नई टहनी बिछाई है। पुराने खर-पतवार का अस्तर दिया है। ऊपर से बाँस की पुरानी टहनी है। बाँस की बत्ती नई है। टाट को सुतली से बाँधना कठिन होता है। गुलो के हाथ कई जगह छिल गए हैं। बंधन देने के लिए बत्ती बची ही थी कि रस्सी खत्म हो गई। टाट को बिछा हुआ ही छोड़ दिया। रस्सी खरीदने के लिए पैसे ही नहीं हैं। रात में सोचा, साड़ी के किनारेवाली पाढ़ से बंधन दे देगा।

सुबह रिनियाँ बाहर गई थी, तो लौटते वक्त देखा कि एक नए मकान के बाहर सुतली फेंकी हुई है। बाँस की कुछ जड़ें भी थीं। रिनियाँ सारा उठाकर ले आई। गुलो को आश्चर्य हुआ। वही देखिए! ईश्वर ने कैसे सुन लिया। कोई रस्सी दो हाथ, तो कोई पाँच हाथ की थी। गुलो बंधन देने में जुट गया। दो लोगों की मदद से टाट को दुकान में लगा भी दिया। कुछ रस्सी बच भी गई।

गुलो को निमंत्रण की सुपारी मिली है। एक तो पास में ही लालो पंडित की पोती की शादी की है। दूसरी दो कोस दूर है। साली की जेठानी की बेटी की शादी है। दोनों में से कोई भी ऐसा नहीं है, जिसकी अनदेखी की जाए। गुलो क्या करेगा? कहाँ से निमंत्रण पूरने जाएगा?

वह हर रोज दो रुपए अलग करके रखने लगा। उन पैसों को छिपाकर रखने लगा। जिस दिन लालो के यहाँ शादी थी, उस दिन तक तीस रुपए जमा हो गए थे। अब बीस रुपए कहाँ से आएँगे? सोचा, अनवर से माँग

लेगा। उसे यह भी चिंता थी कि अगर अनवर ने मना कर दिया, तो क्या करेगा। लेकिन जा रे अनवर, माँगते ही दे दिया।

रिनियाँ आटा गूंध रही थी। आँगन से ही चिल्लाकर बोली—बाबा, भोज खाने भी जाइएगा?

हाँ, गुलो ने गुस्से में कहा, पूछती कैसे है अनजान बनकर।

रिनियाँ ने अपने और माँ के लिए छह रोटियाँ बनाईं। रोटी पर नमक, तेल, मिर्ची डाली। तीन रोटियाँ माँ को पकड़ायी और तीन खुद खाने लगी। छोटुआ काम से लौटा, तो न हाथ धोया और न ही पैर धोया। दूसरा पैंट और कमीज पहनकर लालो के यहाँ चला गया। गुलो बिस्तर पर लेटा रहा। बारात आएगी, तब जाएगा। बारात बारह बजे रात में आई। नाश्ते में चिवड़ा का भूंजा और सेव दिया गया। खाने में मछली-भात था। गुलो खाकर मस्त हो गया।

सुबह रिनियाँ ने पूछा, बाबा, मेरे लिए मछली का एक टुकड़ा नहीं लेते आए?

गुलो ने डाँटते हुए कहा—यह लड़की पागल है। अरी, भूंजा तो जेब में ले लिया। मछली कैसे लेता?

रिनियाँ भूंजा फांकती रही और चाय पीती रही।

छोटुआ साइकिल को चमकाकर रखता है। रोज कपड़े से पोंछता है। साइकिल से काम पर जाता है। कभी-कभार केरियर पर जलावन लाता है। बाबा से बोलता है—इसकी मूठ बदल दीजिए, हाथ से फिसल जाती है।

गुलो गुस्से में कहता है, आज से अब तुम्हारा शुरू हो गया। यह दीजिए, तो वह दीजिए। रख दो साइकिल, घर में पड़ी रहेगी।

कम-से-कम केरियर भी तो बदल दीजिए। घर में पुराना रखा हुआ है। वह बढ़िया है। इसका तो स्प्रिंग टूट गया है।

उसे बदलने में भी पाँच रुपए लगेंगे। रहने दो।

छोटुआ रुआँसा होकर काम पर चला जाता है।

बगीचे से गुलो दो घौद केला काटकर लाया है। एक में दो ही हत्था है। चपरा (केले की एक स्थानीय प्रजाति) है। इसकी सब्जी बनेगी। दूसरा घौद विलायती है। धूप में झुलस गया है। लेकिन पकने लगा है। रिनियाँ

पाँच-सात केले एक बार में ही खा गई। गुलो मना करते हुए कहता है—यह लड़की राक्षसनी की तरह करती है। इतना जुकाम है और केला भकोसे जा रही है।

रिनियाँ तुरंत केला छोड़ देती है। आजकल आम के बगीचे में वह टिकोला खाती रहती है। पेट में दर्द होता रहता है।

आम के बगीचे से होकर एक पगडंडी जाती है। आने-जानेवाले लोग टिकोला तोड़ लेते हैं। गुलो मचान बना रहा है। लीची के पेड़ के ठीक नीचे में। लीची लाल होने लगी है। अब रात-दिन रखवाली करनी पड़ेगी। टार्च नहीं है। गुलो ने सोचा है, किसी दिन मालिक के घर जाएगा। कहेगा, एक टार्च खरीद दीजिए। तीन सेलवाला। जलाएगा, तो पूरे बगीचे में रोशनी ही रोशनी। नहीं देगा, तो एक भी आम या लीची भोग नहीं होने देगा।

दूधवाला बाँस माँग रहा है। पाँच बाँस। वह बाँस रोपेगा। पाँच सौ रुपए देगा। वैसे कोई बाँस डेढ़ सौ से कम में नहीं मिलता है। गुलो चुराकर बेचेगा, तो सौ रुपए में ही बेचने पड़ेंगे।

छोटुआ दोपहर में खाना खाने आया, तो लौटकर फिर गया नहीं। बहाना बना लिया। बगीचे में जाकर बोला—बाबा, गमछे से पेट बाँध दीजिए। बहुत दर्द होता है। और आह-उह करते हुए मचान पर लेट गया। गुलो समझ गया कि साला नाटक कर रहा है। खैर, गुलो ने गमछी बाँध दी। छोटुआ थोड़ी देर लेटा रहा। फिर फुरफुरा कर उठ गया और लीची के पेड़ पर चढ़ने लगा। गुलो ने पूछा—दर्द खत्म हो गया रे?

हाँ, अब कम हो गया है।

छोटुआ ने लाल-लाल लीची तोड़ी। उसे जेब में रखा और फिर गायब हो गया। अपने दोस्तों के साथ क्रिकेट खेलता रहा। आज फिर इस लड़के ने साठ रुपए डुबो दिए। गुलो को अफसोस होता रहा।

गुलो ने उँगली भर का एक टार्च खरीदा है। खूब रोशनी फेंकता है। मालिक ने नहीं दिया। अपने पचास रुपए लगाकर खरीदा है। हाथ में लाठी और जेब में टार्च लेकर गुलो सुबह बगीचा चला जाता है। दोपहर का खाना भी वहीं खाता है। आठ बजे रात में घर लौट आता है।

वह सोच ही रहा था कि अब रात को भी रखवाली करेगा कि एक रात चोर पूरे पेड़ की लीची तोड़ ले गया। पेड़ को देखकर गुलो

की आत्मा कराहती रही। बच्चे उम्मीद लगाए हुए थे कि पकेंगे, तो खूब खाएँगे। हर साल दो-चार सौ रुपए का बेच भी लेता था। मालिक को भी दे आता था। कुछ नहीं हो सका। एक ठकुरबा नामी चोर है। यह उसी का काम है।

दोपहर में रिनियाँ खाना लेकर आती है, तो शाम तक बगीचे में रहती है। टिकोले चुनती है। जलावन के लिए लकड़ी जमा करती है। अरिकंचन के पत्ते तोड़ती है। घास काटती है। इस आँगन, उस आँगन की सेवा-टहल करती है। कोई खाने के लिए दे देता है, कोई मकई का भुट्टा, तो कोई दो-चार रुपए दे देता है।

एक दिन दोपहर में बरस्सेरवाली आई और बोली ए रिनियाँ, लीची तोड़ेगी?

नहीं भौजी, मुझे डर होता है।

धुर, काहे का डर। चलो न। तुम बस खड़ी रहना, तोड़ूँगी तो मैं न।

रिनियाँ उसके साथ चली गई। झुनिया भी थी। उसे डर लग रहा था। बरस्सेरवाली रमन के बगीचे में घुसी और लीची तोड़-तोड़कर आंचल में रखने लगी। रिनियाँ और झुनियाँ का कलेजा धक-धक करता रहा। इधर देखती, उधर देखती। कहीं कोई आ तो नहीं रहा है। रिनियाँ बोली भौजी, लीची में हम लोगों का भी हिस्सा होगा।

हिस्सा किस बात का? तुम कोई तोड़ रही हो? खाने के लिए दो-चार दे दूँगी।

रिनियाँ समझ गई। उसने झुनिया से कहा–तू बोरी का मुँह खोले रखना, मैं तोड़ कर गिराती जाऊँगी।

जब तक बरस्सेरवाली दस-पंद्रह लीची तोड़ती, तब तक रिनियाँ ने पचास-साठ तोड़ लिए। झुनिया ने कहा, अरी, अब छोड़ दो, कोई देख लेगा।

रिनियाँ ने जल्दी-जल्दी से थोड़ा और तोड़ा। दोनों चुपके से जाकर बाँस के झुरमुट में छिप गई। सौ से कम लीची नहीं थी। दोनों खाने लगीं। रिनियाँ ने पूछा, कोई पकड़ेगा भी?

ऊँह, अब कौन पकड़ेगा? पेड़ के पास रहते तब न? झुनिया को अब कोई डर न था।

बाप रे! बरस्सेरवाली को जरा भी डर नहीं होता है। अगर पकड़ लिया, तो बड़ी फजीहत करेगा। अब भी तोड़ ही रही है या चली गई, पता नहीं।–रिनियाँ का कलेजा अब स्थिर हुआ है।

अरी सौतन सब! तुम लोग यहाँ हो बरस्सेरवाली खोइंछा भर लीची लेकर उन दोनों के आगे खड़ी हो गई।

पकड़ा नहीं?–रिनियाँ ने पूछा।

वह बभना (ब्राह्मण) मुझे पकड़ेगा? कहता है जो! कैसा-कैसा गया, तो मूँछवाला आया!

लीची खाते-खाते उन दोनों का मन भर गया। जो लीची बची थी, उसे उन दोनों ने बाँट लिया। बीस-बीस लीचियाँ हिस्से में आईं।

अनवर के मोबाइल पर रुनियाँ का फोन आया। गुलो बगीचे में था। रुनियाँ ने अपनी माँ से बात की। बोली–नतिनी रो रही है। कह रही है नाना के पास जाऊँगी। बाबा क्यों नहीं आ रहे हैं? मुझसे कोई कष्ट है क्या?

बेलावाली बेटी की बात सुनकर व्याकुल हो उठी। बगीचे जाकर गुलो को बताया। गुलो भी उनकी यादों में खो गया। छोटुआ ने सुना कि बाबा दीदी के यहाँ बीना जाएँगे, तो जिद करने लगा–मैं भी जाऊँगा।

अगले दिन रविवार था। गुलो चार बजे बीना चल पड़ा। छोटुआ भी साथ था। रिनियाँवाली लीची संदेश बन गई। नाती-नातिन के लिए गुलो ने और भी कई चीजें खरीदीं। बिस्कुट, चाकलेट, सेव। उसके नाती-नातिन को सेव बहुत पसंद है। गुलो ने डेढ़ किलो घिया और एक किलो साग भी खरीदा। पता नहीं, रुनियाँ के यहाँ साग-सब्जी है या नहीं। टैम्पू पर बैठकर एक घंटे में बीना पहुँच गया।

रुनियाँ ने कहा–बाबा, नाश्ते में चिवड़ा भून देती हूँ?

नहीं बेटा, चाय ही बना लो।–गुलो को शाम में नाश्ता करने की आदत नहीं है। छोटुआ ने नाश्ता किया।

नाती-नातिन संदेश खाने में मगन थे। रुनियाँ चाय लेकर आई, तो देखा कि उसके बेटे-बेटी चौकी के नीचे घुसकर लीची खा रहे हैं। बोली–बाबा, देखिए, सारी लीचियाँ खा गए। बुढ़वा (ससुर) क्या कहेंगे! नैहर का संदेश खुद ही खा गई। रुनियाँ ने लीची छीन ली। चार ही बची थीं। अपने

ददिया ससुर से बोली, देखिए! ये दोनों सारी लीची खा गए। अब इतनी ही बची है।

अच्छा लाओ। बच्चों ने खाया न! मेरे लिए इतना ही बहुत है।

रात में रुनियाँ ने घिया की सब्जी और रोटी बनाई। दूध तो था ही। भैंस और गाय, दोनों दूध देती हैं। दूध बेचती भी है।

अगले दिन सुबह भात-दाल, करेले का तरुआ और साग बना। खा-पीकर गुलो जाने लगा। लेकिन बेटी ने रोक लिया बाबा, आज रुक जाइए। मछली मँगाती हूँ।

गुलो रह गया, लेकिन सुबह होते ही जाने के लिए तैयार।

रुनियाँ बोली बाबा, रोटी-सब्जी बनाती हूँ। भैंस भी दुहा जा रहा है। नाश्ता करके जाइएगा। जाइएगा, तो पता नहीं कब क्या खाइएगा, क्या नहीं।

नहीं बेटी, जाने दो। देर होगी, तो छोटुआ का काम छूट जाएगा। कल भी नहीं गया था। गुलो जानता है मेहमानी करने से उसका गुजर-बसर नहीं चलनेवाला है। रुनियाँ ने बिना चाय के नहीं जाने दिया।

गुलो ने दूधवाले के हाथों जो बाँस बेचा था, उसने रुपए दे दिए। रिनियाँ ने पहले से ही सोच रखा था कि इससे पाठी (बकरी का बच्चा) खरीदेगी। बरस्सेरवाली के पास एक काली पाठी है। रिनियाँ ने उससे मोल-भाव भी कर लिया है। पाँच सौ रुपए में देगी। बेलावाली कह रही है—अरे, हमें नहीं धारता है। देखा नहीं था, दूसरे का पालने के लिए लिया था, वह रहा? छोड़ दो, मत लो।

लेकिन रिनियाँ जिद पकड़े हुई है—तुम्हें नहीं धारता है। यह मैं लूँगी। मुझे धारेगी।

रिनियाँ पाठी खरीदकर ले आई। पथिया में उसके आगे घास डाल दी। पाठी उसमें से घास टुंगने लगी। थोड़ी ही देर में पाठी रिनियाँ को पहचानने लगी। रिनियाँ अगर कहीं जाने लगती, तो पाठी भें-भें करने लगती। उसे आते देखती तो मिमियाने लगती। रिनियाँ उसका थूथन उठाकर चुम्मा लेती है और पूछती है—क्या हुआ?

बहुत बारिश हुई है। दो दिन बारिश होती रही। बगीचे में जो मूँग की फसल लगी है, उसमें पानी जमा हो गया है। पता नहीं, मूँग की फसल बचेगी या बर्बाद हो जाएगी। मूँग की फसल पकने लगी थी। रिनियाँ ने पकी हुई काली छिम्मियाँ चुनीं। उसमें से पाव भर दाना निकला। सत्यनारायण कितने दिनों से कह रहा था—पहली तोड़ में से थोड़ी मुझे भी देना, दाल खाऊँगा।

रिनियाँ सारा मूँग उसे ही दे आई। उसने बीस रुपए दिए। बेलावाली ने कहा भी—अरी, क्या अपने घर में दाल की जरूरत नहीं थी? खुद मूँग की दाल खाने का शौक नहीं था?

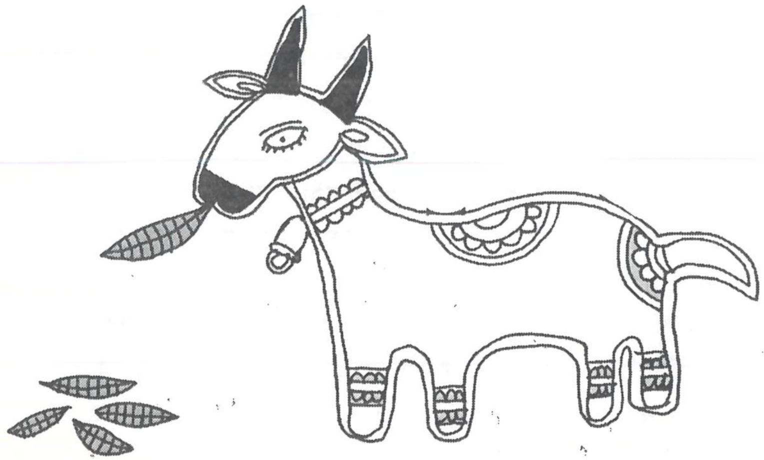
रिनियाँ ने सँभालकर रुपए रखे और कहा—ये रुपए मैं किसी को नहीं दूँगी।

रुनियाँ का देवर नेरहू आया है। आकर दुकान पर बैठ गया। रिनियाँ ने पूछा—क्यों आए हैं?

घूमने के लिए।

घूमने आए हैं, तो जाइए न! यहाँ क्यों बैठे हुए हैं? जाइए, बैरिया मंच घूम आइए।

नेरहू कोई जवाब नहीं देता है। सिर्फ मुस्करा रहा है। रिनियाँ पूछती है—फूफा के घर पर नहीं जाएँगे?



वहीं तो था।

तो अब गांव जाइएगा?

नहीं, आज रहूँगा।

कहाँ रहिएगा?

नेरहू कोई जवाब नहीं देता है, सिर्फ मुस्करा रहा है।

आज तुम्हारे यहाँ ही मेहमानी करेगा। उमेशबा उस पार से चिल्लाकर कहता है।

जमे रहिए हो। पंद्रह दिन मेहमानी कीजिए। उमेशबा नेरहू से मजाक करता है।

यहाँ रहेंगे? यहाँ तो न घर है, न दरवाजा है। न पलंग है, न टीवी है। उतना आराम, उतना सुख छोड़कर यहाँ क्यों रहेंगे? रिनियाँ को मेहमान रखना पहाड़ जैसा लगता है।

नेरहू चुपचाप रिनियाँ को देखता रहता है और मुस्कराता रहता है।

रिनियाँ पूछती है—चाय पीजिएगा?

नहीं।

तो जाइए न, अँधेरा होता जा रहा है।

रिनियाँ की बातों का कोई असर नहीं होता है। नेरहू बैठा रहता है और टुकुर-टुकुर रिनियाँ को निहारता रहता है।

रिनियाँ वहाँ से चली गई। लौटकर आई, तो देखा नेरहू बैठा ही हुआ है। थोड़ी देर के बाद नेरहू उठा और गजना पुल की तरफ चला गया। पुल पर आधे घंटे तक बैठा रहा। वहाँ से उठकर खैरबन्नी चला गया। सड़क के किनारे बैठा रहा।

रिनियाँ ने माँ से पूछा—नेरहू कहाँ गया? वह भी खाना खाएगा?

बेलावाली ने छोटुआ से कहा—जाकर देख तो आओ, कहाँ है। साइकिल तो यहीं है।

नेरहू छोटुआ के साथ चला आया। दुकान की बेंच पर बैठ गया।

रिनियाँ खाना बनाने लगी। माँ से बोली—उसे कहो, चला जाएगा।

माँ बोली—उसे कैसे कहूँगी चले जाने के लिए। रिश्तेदार है न!

नहीं, बोलो चले जाने के लिए।

क्या बात है? बोलो न।

मुझे डर लग रहा है।

किस बात का डर हो रहा है?

उसका मुँह देखती हूँ, तो डर लगता है।

बेलावाली चुप हो गई और सोचने लगी।

खाना हो गया, तो गुलो ने नेरहू से पूछा—कहाँ सोइएगा? यहाँ या अपने फूफा के यहाँ?

नेरहू ने कोई जवाब नहीं दिया। साइकिल उठाई और चला गया।

एक दिन दस बजे रात में दशरथ मंडल का मुंशी गुलो के पास आया और बोला—गुलो भाई, एक बड़े काम की बात बताने आया हूँ। मुझे मालिक ने भेजा है। नेपाल में एक लड़का है। मालिक के साढ़ू का बेटा है। जमीन जायदादवाला है। मिठाई बनाता है। विवाह में जितना खर्च होगा दस बीस हजार वह मेरा मालिक ही देगा। घर की लड़की है। सब कुछ देखा-सुना है। इतनी सुंदर और कामकाजी लड़की और कहाँ मिलेगी। आपकी क्या राय है, यह मालिक ने पूछा है।

गुलो गंभीर हो गया। थोड़ी देर सोचता रहा। फिर बोला—भाई, हम आपको और आपके मालिक को भी सम्मान देते हैं। मुझे चार महीने का समय दीजिए। मेरा बड़ा बेटा बाहर है। नालायक ही सही, लेकिन है तो बेटा ही। उससे भी पूछ लेने दीजिए। नहीं पूछूँगा, तो कल को कहने के लिए हो जाएगा कि न बताया, न पूछा, न जान पाया। भारी अपयश हो जाएगा। इसलिए चार महीने रुक जाइए।

दशरथ मंडल मुंशी की राह देख रहा था। गुलो का उत्तर सुनकर बोला—कोई हर्ज नहीं। और अपने घर चला गया।

एक दिन अनवर के मोबाइल पर अर्जुन का फोन आया। पूछा—माँ-बाबा कैसे हैं?

अनवर ने कहा—कैसे हैं यह जानकर क्या करोगे? अपनी फिक्र करो। अपनी पत्नी और बेटे की फिक्र करो। माँ-बाप की फिक्र करके क्या होगा? खाया या भूखा है, मरा या जिंदा है—इससे तुम्हें क्या मतलब? खबरदार! अब मुझे फोन मत करना।

अनवर ने फोन काट दिया।

बेलावाली ने अनवर से कहा—वह मेरा बेटा है क्या? मेरा बेटा तो मर गया। और फिर रोने लगी।

गुलो की तबीयत खराब है। खांसी करते-करते बेदम हो जाता है। दिन भर खेत में थोकड़ा (जोत के बाद उखड़ी घास-फूस) चुनता रहा। दो सौ रुपए में थोकड़ा निकालने की बात हुई थी। धूल-मिट्टी से पूरी देह भर गई। पता नहीं, कितनी धूल फेफड़े में गई होगी। पसीने और धूल से देह में खुजली हो रही है। खेत से लौटा तो लगा, जैसे देह से आग निकल रही हो। रिनियाँ को जल्दी-जल्दी पंखा चलाने के लिए कहा। रिनियाँ के हाथ में छोटा बंगाली पंखा था। उससे कम हवा लगती है। अभी आँधी ही गुलो के शरीर के ताप को कम कर सकती है।

जाओ, दौड़कर पंखा लाओ। गुलो ने रिनियाँ को आदेश दिया।

पैसा नहीं माँगेगा? पूछते हुए भी रिनियाँ को डर हुआ।

लो न पैसे। गुलो गरज उठा।

दो न माँ पैसे। रिनियाँ माँ पर गुस्साई।

बेलावाली ने आंचल का खूँट खोलकर पैसे दिए। गुलो का प्रचंड रूप देखकर वह कुछ नहीं बोली। कोई और दिन होता, तो बहस करने लगती। दूसरे पंखे की क्या जरूरत? इसी से काम चलाओ न!

वही पंखा अगले दिन टूट गया। रिनियाँ जोर-जोर से पंखा चला रही थी। खूँटे में ठोकर लगी कि ताड़ के पत्ते डंडे से बाहर निकल गए। पंखा दस रुपए में दिया था। गुलो पंखा के लिए अफसोस जता रहा है। अनवर ने कहा, जाइए न, बदल देगा। यह कोई बात हुई। कल ही पंखा लिया और आज ही टूट जाएगा। अब सारी चीजें नकली हो गई हैं।

अब बदलेगा सो! वह लंगड़ा एक नंबर का झक्की है!—रिनियाँ बोली।

गुलो असमंजस में था। अनवर ने ठेलकर भेजा एक बार कहके देखिए न।

गुलो ने जाकर लंगड़े से कहा—हे रे बाबू! ऐसा ही पंखा बनाते हो? देखो तो, यह तो एक ही दिन में टूट गया।

लंगड़े ने बहस नहीं की। पंखे को उलट-पलटकर देखा और बेटे से बोला—रे दूसरा दे दो।

गुलो ने चलाकर देखा। पंखा खूब हवा दे रहा था।

आम अब पकने लगे हैं। एक-आध पेड़ से गिरता है। गुलो ने निगरानी बढ़ा दी है। बगीचे से होकर राही-बटोही जाते रहते हैं। जैसे ही गिरे हुए आम देखते हैं कि उठा लेते हैं। बगल में जिसका बगीचा है, वह भी उठा लेता है। इसलिए नजर रखनी पड़ती है। एक दिन रमन आम उठा रहा था कि रिनियाँ दौड़ी ए, आम क्यों उठा रहे हैं?

यह आम मेरा है।

आपका पेड़ है वहाँ, और आम गिरता है यहाँ। रिनियाँ आम उठाते हुए बोली।

यह मुझे दे दो। मुझसे कच्चे आम ले लो।

अपना रखिए। मुझे नहीं चाहिए कच्चा आम। रिनियाँ आम लेकर मचान के पास चली आई। सुनाकर बोली कितना लोभी है!

आजकल गुलो सुबह में दुकान पर रहता है। बेलावाली और रिनियाँ मुँह अँधेरे बगीचे चली जाती है। गिरे हुए आम चुनती है। दो-चार मिल ही जाते हैं। इस बार आम कम है। पहले बेलावाली हजार रुपए का आम बेच लेती थी। रुपए बगीचे में ही छिपाकर गाड़ देती थी। इस बार नहीं हो पाएगा। अब तक पचपन रुपए के ही आम बेच पाई है।

बंबई आम के पेड़ में एक ही टहनी में दस-बारह आम का गुच्छा है। रिनियाँ ने सोचा है—यह गुच्छा ही मालिक को दे आएगी। मालिक बहुत खुश होगा। एक बार रुनियाँ पेड़ के पके हुए आम लेकर गई थी, तो मालिक ने पचास रुपए दिए थे। मालकिन ने खाने के लिए दिया था।

रिनियाँ अकेली दो दिनों तक मूँग तोड़ती रही। एक-एक छिट्टा। एक दिन दोनों माँ-बेटी ने तोड़ा। दो मजदूर भी थे। रिनियाँ ने मूँग को सुखाया। उसे तैयार किया। आठ-नौ किलो हुए। एक बार और मूँग की छिम्मी तोड़ेगी। उसमें जितना दाना निकले।

पानी नहीं बरसने से मूँग के दाने छोटे हो गए। गुलो कहता है—जितना मूँग तैयार हुआ है, वह मालिक को दे आएँगे।

बेलावाली हिसाब लगाने लगती है। हल लगा, बीज लगा। सब दे

ही आएगा, तो पूँजी भी डूब जाएगी। वह कहती है—इतना जो खर्चा हुआ, वह घर से दीजिएगा? ऐसी खेती कोई क्यों करेगा?

गुलो को गुस्सा आ जाता है—मादरचोद! जाओ न, सब बेच के खा जाना।

बेलावाली चुप हो जाती है।

रिनियाँ की पाठी अब थोड़ी तंदुरुस्त हुई है। चाय बनाने के बाद गुलो पत्ती फेंक देता था। अब नहीं फेंकता है। सब पाठी खा जाती है। रिनियाँ बगीचे जाती है, तो उसे भी ले जाती है। पाठी दिन भर बगीचे में घास चरती है। रिनियाँ ने उसे माला पहना दी है। काले रंग पर उजली माला बहुत सुंदर लगती है।

दो-चार गुलाबखास और बंबई आम रोज गिरते रहे। अब लगता ही नहीं है कि पेड़ में आम हैं। गुलो सोचता ही रहा कि कुछ बंबई आम मालिक को दे आए, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। जो आम गिरता था, कोई न कोई खा जाता था। कभी छोटुआ, तो कभी रिनियाँ। खुद दोनों पति-पत्नी भी खाते थे। दस-बीस रुपए का बिक भी जाता था। मालिक के पास पाँच-दस आम लेकर जाता तो पूछते ही, अरे, बस इतना ही आम हुआ? गुलो क्या जवाब देता। मालिक को लाख समझाता, तो वे नहीं मानते कि इस बार पेड़ में आम कम लगे थे। इससे अच्छा कि एक भी नहीं देगा। मालदह और कलकतिया के पेड़ में थोड़े आम हैं। पकने लगेंगे, तो मालिक के सामने ही तोड़ेगा और बाँट देगा।

बेलावाली को बुखार हो गया है। उतरता ही नहीं है। दो-दो गोलियाँ खाईं। कोई फायदा नहीं हुआ। दम फूल रहा है। रात में आधी रोटी भी नहीं खा पाई। कमजोरी है। दिन भर लेटी रहती है। शाम को दुकान के आगे सड़क पर बैठ जाती है। गुलो और रिनियाँ की राह देखती रहती है। सूरज डूबने के समय रिनियाँ पाठी के साथ बगीचे से लौटती है। अँधेरा हो जाता है, तब गुलो लौटता है। शाम को बगीचे में मच्छर बैठने नहीं देता है। काट-काटकर देह फुला देता है। उमस रहने पर तो प्राण विकल हो उठते हैं। गुलो, बेलावाली और रिनियाँ सभी सड़क पर बैठे-बैठे ही आम का हिसाब-किताब करते हैं। कौन लड़का, कौन-सी स्त्री कितने आम ले गई। खोदे गए, फटे और सड़े हुए आम कितने

थे। बेलावाली को गुस्सा आता है कि कोई आम क्यों ले गया। रिनियाँ से बहस करती है—तुम थी कहाँ? बगीचे में आने क्यों दिया?

रिनियाँ गुस्से में चिल्लाती है—मैं क्या करूँगी! बाबा ने छीनने ही नहीं दिया।

यह बुढ़वा सब को शह दिए रहता है। तुम दोनों सब बर्बाद कर दोगी।

रिनियाँ को यह बात लग गई। चिल्ला उठी—हमने क्या किया री?

गुलो बगीचे से लौटा ही था। मन पहले से गरमाया हुआ था। वह भी चिल्लाया—मादरचोद! चुप रहोगी या नहीं?

अब लो—यह कहकर बेलावाली चुप हो जाती है। फिर कहती है—मेरा बुखार तो उतर ही नहीं रहा है। मैं रहती, तो क्या किसी को बगीचे में घुसने देती!

रात में रिनियाँ ने मूँग का उसना बनाया। किसी के बगीचे से एक नींबू ले आई थी। गुलो ने उस नींबू को उसना में निचोड़ दिया। दो-चार कौर ही तो खाए होंगे कि दम फूलने लगा। गुलो रात भर बेचैन रहा। नींद नहीं आई। दम फूलता था और खाँसी होती थी। दिन में भी गुलो ने कुछ नहीं खाया। मुँह में जैसे ही कुछ लेता कि साँस अटकने लगती। बगीचे भी नहीं गया। मचान पर लेटा रहा।

रिनियाँ ने माँ को बताया—बीड़ी पी-पीकर खाँसता रहता है। इतनी बीड़ी कहीं लोग पिए। रात-दिन बीड़ी धूँकता रहता है।

गुलो अपराधी की तरह चुपचाप सुनता रहा। उसे एक ही चिंता है—आम का क्या होगा? बुढ़िया को बुखार है। उसे खुद उठा ही नहीं जाता। लड़की अकेली कभी घर तो कभी बगीचे दौड़ती-भागती रहती है। लड़का आठ बजे तक सोया ही रहता है। उसे घर और बगीचे से कोई मतलब नहीं है। सोकर उठता है और चाय पीकर मिल पर चला जाता है। बगीचे की रखवाली कौन करेगा? लोग सारा आम तोड़ लेंगे।

रिनियाँ दो किलो गेहूँ रामप्रसाद की आटा चक्की पर दे आई थी। आटा खत्म हो गया है। वह पिसाई देने के लिए पैसे माँगती है—माँ, तीन रुपए दो।

छोटुआ से ले लो। दस रुपए उसने लिए थे, बचे होंगे।

अब वह देगा? सब खा गया होगा।

पाँच रुपयों का ही तो पानी पुड़ी खाया होगा न? बाकी पाँच रुपए तो बचे ही होंगे। जाओ न, माँग कर ले लाओ। ठकना की दुकान की तरफ गया होगा।

रिनियाँ लौटकर आ गई, बोली नहीं दिया। कहता है मैंने लिया ही नहीं।

यह लड़का एक भी पैसा घर में रहने नहीं देता है। अब क्या करूँ हे भगवान! बेलावाली छोटुआ की निंदा करने लगती है।

रिनियाँ सुनते-सुनते परेशान हो जाती है। गुस्सा होकर कहती है—उफ्फ! दो न! मिल भी बंद कर देगा।

रात होनेवाली है। उसे रोटी बनाने की भी चिंता है। कहती है—दोगी या नहीं दोगी? नहीं तो मैं जाकर सो जाऊँगी।

बेलावाली अछता-पछताकर साड़ी की खूँट से पैसा निकालती है। चार ही रुपए हैं। तीन रुपए रिनिया को दिए। अब एक ही बचा है। और पहाड़ जैसी रात है।

भगवान! आप ही पार लगाना! बेलावाली देवताओं को बताकर निश्चिंत हो गई।

कंदाहावाली जिस दिन से नैहर गई है, गुलो से खाया ही नहीं जाता है। कंदाहावाली बहुत अच्छा खाना बनाती थी। जैसी सब्जी, वैसी ही रोटी। गुलो खूब खाता था। बहुत स्वादिष्ट लगता था। रिनियाँ को वैसा खाना बनाना नहीं आता है। सब्जी जैसे-तैसे उबाल देती है और रोटी कहीं मोटी, कहीं पतली। रोटी का किनारा कच्चा ही रह जाता है। कम खाने से गुलो कमजोर हो गया है। हक-हक करता है।

गुलो ने खूँटे काट रखे हैं। घर के कई खूँटे सड़ गए हैं। आज बदलेगा—कल बदलेगा, यही सोचता रह जाता है। अब तो ताकत ही नहीं लग रही है कि कुछ करेगा। कोई काम करने का मन नहीं होता है। मन करता है, लेटे रहें।

बेलावाली भारी चिंता में पड़ी है। बूढ़े को क्या हो गया! अनवर से निहोरा करती है—अनवर बौआ, बुढ़वा को कोई दवा नहीं दीजिएगा?

अभी रुको। इसे सुई देनी पड़ेगी। अनवर सोचता है गुलो को विटामिन बी की सुई लगाना ठीक रहेगा।

रिनियाँ की पाठी खाती-पीती नहीं है। पता नहीं, क्या हो गया है। माँ बार-बार कहती है कि हमें बकरी पालना नहीं धारता है, बेच लो। हारकर रिनियाँ ने पाठी बेच दी। जिस समय पाठी को लेकर खरीदार जा रहा था, रिनियाँ उदास थी। उजली माला अब भी उसके गले में सुंदर लग रही थी।

छोटुआ ने आज फिर उसे देख लिया। जलेसर के घर में रिनियाँ टीवी देख रही थी। चौकी पर उसके बेटों से सटकर बैठी हुई थी। छोटुआ गुस्से में है। आज उसे पीटेगा। जलेसर का परिवार ठीक नहीं है। उसके परिवार में सभी चोर-छिनाल हैं। शराब पीते हैं। रिनियाँ को देखते ही छोटुआ बहस करने लगा अरी ओ! कहाँ थी?

कहीं थी, तुम्हें इससे क्या?

उसके आँगन क्यों जाती हो?

हाँ, जाऊँगी। तुम क्या कर लोगे?

देखेगी? छोटुआ ने कसकर एक तमाचा जड़ दिया। रिनियाँ रोने लगी। रोते-रोते आँगन चली गई। बरामदे पर बैठकर रोती रही।

गुलो को छोटुआ पर गुस्सा आया। गरजकर बोला—लड़की को तुमने क्यों मारा रे साला?

मारूँगा नहीं! जलेसर के यहाँ टीवी देखती है।

इस लड़के को बड़े छोटे का लिहाज नहीं है। कैसे बड़ी बहन को मारा गया! बेलावाली छोटुआ को लाज लगाती है।

गुलो दुकान पर से चिल्लाने लगा—अरी ओ लड़की, चुप होती है या नहीं?

पहले गुलो रात को भी बगीचे की रखवाली करता था, इस बार ऐसा नहीं हो पाया। अब उतनी सामर्थ्य नहीं है कि रात-रात भर जगा रहे। सियार, नेवला और लोगों को भगाता रहे। मुँह अँधेरे बगीचे जाता है। देखता है, सारा आम गायब। कहीं किसी गड्ढ़े में या झाड़ी में दो-चार आम मिले तो मिले। दिन में जो आम पेड़ से गिरते हैं, उसे बेच लेता है। उसी से घर का नमक-तेल चलता है।

बेलावाली खुद ही बोलती है, पहले तो तीन-चार हजार के आम बेच लेती थी। इस बार कुछ नहीं होगा।

सभी उम्मीद लगाए हुए हैं। आम बेचकर रिनियाँ चप्पल लेगी। जाड़े में ही टूट गई थी। तब से नंगे पैर घूमती है। इस बार नहीं छोड़ेगी। लेगी ही। छोटुआ पैंट लेगा। साइकिल ठीक कराएगा। बेलावाली गृहदेवीवाले घर पर प्लास्टिक छवाएगी। गुलो नलकूप ठीक कराएगा।

लेकिन कुछ भी नहीं हुआ। बीच-बीच में दो किलो-चार किलो आम बिकते रहे, लेकिन पैसे किस छेद से कहाँ चले गए, उसका कोई हिसाब नहीं रहा। सिर्फ छोटुआ ने एक सौ बीस रुपए में पैंट खरीदा। रिनियाँ चप्पल के लिए रूठी हुई है।

आम खत्म होने-होने पर था। गुलो को बार-बार रुनियाँ की याद आ रही है। नाती-नातिन की याद आ रही है। सभी उम्मीद कर रहे होंगे कि नाना आम लेकर आएँगे। गुलो रोज सोचता है, आज जाएगा, कल जाएगा। मगर कोई न कोई बाधा आ ही जाती है।

एक दिन अचानक कंदाहावाली पहुँच गई। छोटे भाई के साथ कंदाहावाली का आना सबको हैरान कर गया।

पेड़ों के आम टूट गए थे। फिर भी रिनियाँ रोज बगीचे जाती है। पत्तों में छिपा कोई आम भट् से गिर पड़ता है। रिनियाँ बहुत जतन से आम उठाती है। उसे निहार-निहार कर देखती है। बहुत खुशी होती है। बगीचे जा रही थी, उसी समय कंदाहावाली आई। रिनियाँ थोड़ी देर रुक गई। फिर जाने लगी, तो पूछा—बगीचे जाओगे सुजीत? सुजीत दौड़ पड़ा। संयोग ऐसा कि जैसे ही वह पेड़ के नीचे खड़ा हुआ कि एक गुलाबखास धब से आगे में गिरा। उस आम को लेकर सुजीत घर आया यह मेरा है।

रिनियाँ सुजीत के साथ खूब खेलती है। वह कभी साथ नहीं छोड़ता है। भौजी के आने से सबसे ज्यादा खुशी उसे ही हुई है। अब उसे खाना नहीं बनाना पड़ता है। सिर्फ पानी ला देती है। दुकान से सामान ला देती है। अब गुलो बड़े चाव से खाने लगा है।

दो दिन बाद कंदाहावाली ने पैसे दिए। गुलो पाँच किलो प्लास्टिक

खरीद लाया। साढ़े पाँच सौ में मिले। पचास रुपए मजदूर ने लिए। छप्पर पर प्लास्टिक फैला कर बत्ती से बाँध दिया गया। कंदाहावाली ने एक काम और किया। गुलो से बोली पापा, नलकूपवाले मिस्त्री को बुला लाइए, ठीक कर देगा।

गुलो बोला—कनियाँ, उसमें एक हजार रुपए लगेंगे। लेकिन मेरे हाथ पर एक भी पैसा नहीं है।

बुला लाइए न। जो लगेगा, दूँगी।

गुलो को खुशी से रहा नहीं गया। दुकान छोड़कर मिस्त्री की तलाश में निकल गया। इनरा गान्ही की दुकान पर गया। मिस्त्रियों का अड्डा वही है। रिनियाँ से भी न रहा गया। पीछे से वह भी गई।

अरसे से बंद पड़े नलकूप में कई झमेले होते हैं। दोपहर तक नलकूप ठीक हुआ। पानी आने लगा। सबसे पहले गुलो ने कपड़े धोए। जी भर स्नान किया। छह महीने पर आज नलकूप ठीक हुआ है। गुलो का रोम-रोम पुलकित है। आज वह बेटी के घर आम लेकर जाएगा।

गुलो बीना से लौटने लगा, तो रुनियाँ ने ढाई किलो मकई, एक किलो मूँग और दो कद्दू दिए। घर लौटने पर पता चला कि छोटुआ ने काम छोड़ दिया है। गुलो बीना में था, तो निश्चिंत था। कोई तनाव नहीं था। यहाँ आते ही हजार तरह की फिक्र होने लगी।

गुलो प्लाई मिल पर गया। दशरथ मंडल ने कहा—आपका बेटा काम करने के लायक नहीं है। कभी आता है, कभी नहीं आता है। कभी बिना कहे-सुने ही दोपहर में भाग जाता है। काम का नुकसान होता है। ऐसे में उसे कौन काम पर रखेगा?

गुलो ने कहा—क्या कीजिएगा। बच्चा है, उसे बुद्धि नहीं है। हमने उसे समझाया है। अब ऐसा नहीं करेगा।

ठीक है, कल से भेज दीजिएगा। दशरथ का जवाब सुनकर गुलो के सिर पर से बोझ उतर गया।

कंदाहावाली जबसे आई है, राशन दुकानवाला अरबा चावल खाती है। गुलो को बारह किलो गेहूँ और अट्ठारह किलो चावल मिले थे। वही चल रहा है। अरबा चावल का भात किसी को अच्छा नहीं लगता है। लेकिन करेगा क्या? उसना चावल अट्ठाइस रुपए किलो है। उतना पैसा कहाँ से

लाएगा। कंदाहावाली से नहीं रहा गया तो बोली–अरबा चावल का भात अब खाया नहीं जाता।

बेलावाली ने सुना तो रिनियाँ को बुलाकर कहा–बाबा से बोलो, उबला हुआ चावल ला देंगे।

गुलो सुन ही रहा था। मेरे पास पैसा है? जाओ, सत्यनारायण की दुकान से उधार ला दो।

सत्यनारायण का कर्ज बढ़ता जा रहा है।–बेलावाली को चिंता सता रही है। वह कल से ही तकादा करने लगेगा।

करने दो। अच्छा भात खाने के लोभ में गुलो बेफिक्र हो जाता है।

रुनियाँ ने जो कद्दू दिए थे, उनमें से एक तो खिच्चा था, दूसरा जुआया हुआ। रिनियाँ कद्दू फाड़कर दिखाती है। गुलो बताता है–ऊपर से छिलका निकाल दो। बीज भी निकाल दो। थोड़ा मीठा सोडा डाल दो। गलकर भात हो जाएगा।

कद्दू रखकर रिनियाँ दुकान की तरफ चली जाती है।

छोटुआ अभी तक सोया हुआ है। उसके पास जाकर गुलो चिल्लाता है–रे साला! सोया ही रहेगा? आज भी काम पर जाएगा या नहीं?

छोटुआ तेजी से उठता है–शोर क्यों मचा रहे हैं? अभी जाने का समय हुआ है?

रे साला, तू सोए-सोए ही समझ जाता है कि समय नहीं हुआ है?

छोटुआ मुँह-हाथ धोता है। दुकान पर आकर कहता है–चाय दीजिए।

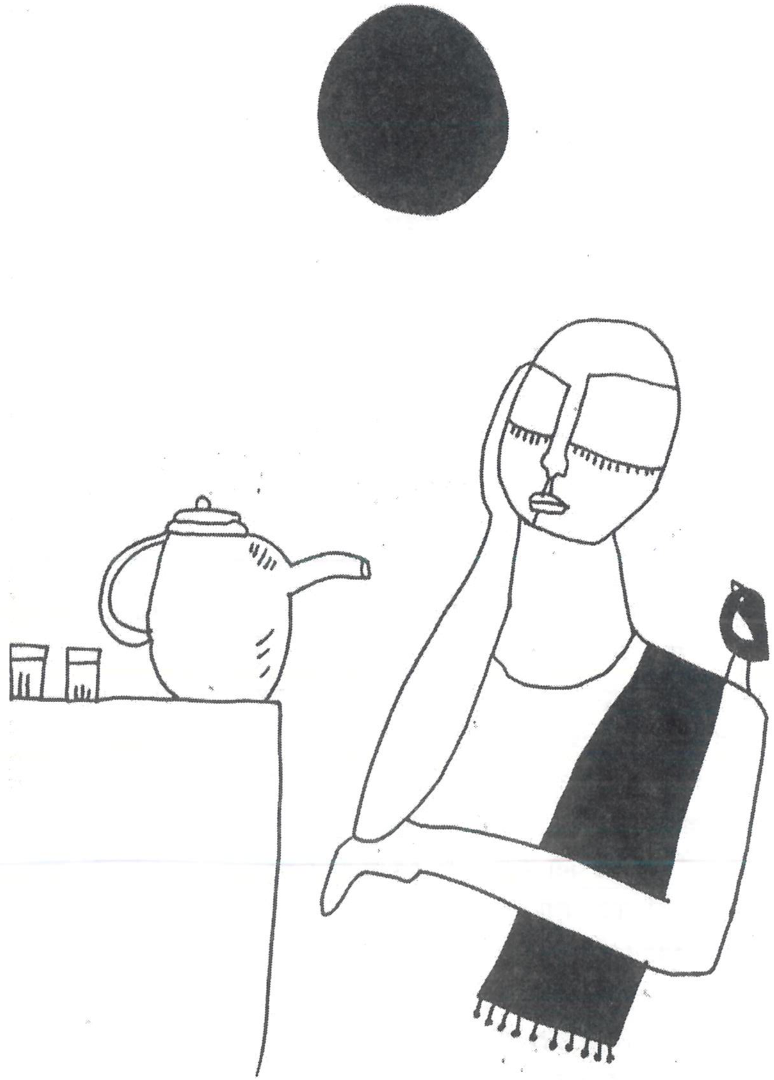
गुलो चाय बना रहा है। छोटुआ उसमें और चीनी डालता है और दूध तथा पत्ती मिलाता है। खुद ही बड़े गिलास में भरकर चाय निकालता है।

गुलो चिल्लाता है–साला! हाहुती लगा है!

रुपया दीजिए।–छोटुआ गुस्से में कहता है।

गुलो तीन रुपए देता है। उससे छोटुआ झिलिया खरीदता है और उसे चाय में डालकर पीता है।

ननिहाल से आने के बाद एक-आध दिन तक सुजीत सकुचाया रहा। उसके बाद वह सहज हो गया। अनवर के पास गया और पहले की तरह ही हाथ फैलाकर बोला–टाका दीजिए।



अर्जुन पंजाब से लौट आया। देखा, गुलो बिस्तर पकड़ चुका है। ताकत ही नहीं लग रही थी। देह में कोई दम नहीं था। रह-रहकर खाँसी करे और कराहे। चाय की दुकान बंद हो गई थी। गुलो सोचता था, थोड़ा स्वस्थ हो जाएगा, तो फिर से दुकान चलाएगा। पैसे नहीं हैं, जो इलाज कराएगा। अस्पताल की दवा का कोई असर नहीं होता है। पेंशन मिलेगी, तो किसी अच्छे डॉक्टर से दिखाएगा।

अर्जुन से कहने का मन नहीं कर रहा है। कहेगा भी, तो वह कुछ नहीं करेगा। बेकार में मुँह खाली करेगा। उसके मना करने पर दुख होगा। वह तो आया और दो-चार दिन ही हुए कि चूल्हा अलग कर लिया। बाप-माँ की जरा भी चिंता नहीं हुई। एक दिन गुलो से पूछा—चाय की दुकान चलेगी? चला पाइएगा?

अर्जुन की आवाज में कोई दया-माया नहीं थी। पूछने का ढंग एकदम रूखा, जैसे डंडा चला रहा हो। गुलो को लगा, जैसे अर्जुन उसके पुरुषार्थ को ललकार रहा हो, उसकी सामर्थ्य को मिट्टी में मिला रहा हो। उसके भीतर गुस्से की लहर उठी। मन तो हुआ कि अर्जुन को ऐसा थप्पड़ मारे कि दांती लग जाए।

गुलो ने कुछ नहीं कहा। अर्जुन खड़ा था। देरी बर्दाश्त नहीं हुई।

दुकान में टाट लगा देता हूँ। इतना कहकर वह चला गया।

गुलो को लगा जैसे अर्जुन कह रहा हो टाटी (चिता) पर दे आता हूँ। गुलो का हृदय फट गया। रोने लगा। निःशब्द रुदन। फिर पता नहीं कब सो गया। खाने के लिए भी नहीं उठा।

अगले दिन अर्जुन ने टाट लगा दिया। सड़क की तरफवाला दरवाजा बंद कर दिया और आँगन की तरफवाला दरवाजा खोल दिया। लगता ही नहीं था कि यहाँ कभी कोई दुकान थी। चूल्हा भी तोड़ दिया। कोई निशान ही नहीं बचा।

दुकान थी, तो गुलो कुछ देर वहाँ बैठता था। कोई आता, तो उससे अपना सुख-दुख बतियाता। अब बैठने का वह ठिकाना भी न रहा। घर में ही मचान पर लेटा रहता है। दुनिया अँधेरी हो गई।

अर्जुन झाँकता भी नहीं है। बाप मरा या जिंदा है, कोई परवाह नहीं। मन होता है, तो रिक्शा चलाता है, नहीं तो दारू पीता रहता है। कंदाहावाली

खाना अलग बनाती है। रिनियाँ अलग। लेकिन रिनियाँ की बनाई रोटी गुलो से खायी नहीं जाती है। मन मसोस कर किसी तरह थोड़ा-बहुत खा लेता है। वह तो धन्यवाद छोटुआ को कि किसी तरह नमक-तेल की व्यवस्था हो जाती है। नहीं तो भूखे रहना पड़ता।

ठग भांजे ने सुना कि मामा बहुत ज्यादा बीमार हैं, तो भेंट करने आया। गुलो ने पूछा—महेंदर कैसे हो?

मेरी भी हालत खराब ही है मामा। पैरवाला घाव छूट ही नहीं रहा है। पैर फूलकर तुम्मा हो गया है।

मैं तो अब चला महेंदर! तुम्हें भी जल्दी ही बुला लूँगा। बस इतना कहकर गुलो चुप हो गया और आँखें बंद कर लीं।

गुलो की बातें सुनकर महेंदर अवाक रह गया। उसे हैरानी हुई कि उसने ऐसा क्या कह दिया कि मामा गुस्सा हो गए और ऐसी बुरी बात कह दी। उसे बहुत दुख हुआ। वहाँ से चुपचाप उठ गया। रिक्शे पर बैठकर अपने घर जाते हुए महेंदर को लग रहा था जैसे गुलो उसे पकड़ने आ रहा है। उसका शाप उसे खदेड़ता रहा। घर में भी उसे लगता था कि गुलो दरवाजे पर बैठी बिल्ली की तरह टुकुर-टुकुर उसे ही देख रहा है। उसे डर होने लगा।

महेंदर ने सत्यनारायण भगवान की पूजा कराई। गुलो को संवाद भिजवाया मामा को कहना आने के लिए।

गुलो नहीं जा सका। हालत ठीक नहीं थी। रिनियाँ गई थी। रात में रिनियाँ को नहीं आने दिया। भौजाई जिद करने लगी, तो वहीं रुक गई। सुबह ही खबर आई कि गुलो की तबीयत बहुत खराब है। रिनियाँ को बुलाया है। रिनियाँ ने सुना तो तुरंत चल पड़ी। भौजाई ने कहा भी कि चाय पी लो, लेकिन वह नहीं रुकी। सीधे मचान के पास गई और गुलो से पूछा—बाबा, क्या हुआ?

गुलो ने आँखें खोलीं और बोला—आ गई? रिनियाँ को देखकर गुलो को परम संतोष हुआ। बोला—समूचे शरीर में लहर है। रिनियाँ ने देह छुआ, देह ठंडी थी। उसे कुछ समझ में नहीं आया कि यह कैसी लहर है। वह बाबा का पैर दबाने लगी।

मुझे तुम्हारी ही चिंता है। गुलो ने कहा।

मेरी चिंता क्यों करते हैं? चिंता मत कीजिए। ठीक हो जाइएगा। गोली ला दूँगी।–रिनियाँ ने सोचा कि ब्रजेश से पूछकर गोली ला देगी।

चाय पी तुमने?–गुलो ने बड़े ही स्नेह से पूछा।

नहीं, कहाँ पी है। भौजी कह रही थी, लेकिन नहीं पी। देर हो जाती। बनाकर ला दूँ?–रिनियाँ को लगा कि बाबा ने चाय नहीं पी है।

मैंने पी ली है। जाओ, तुम भी पी लो। बची है थोड़ी-सी।

चाय ठंडी हो गई थी। आधा कप रही होगी। गर्म करने के लिए चूल्हे पर चढ़ाएगी, तो जो भी है, वह भी जल जाएगी। रिनियाँ ने ठंडी चाय ही पी ली।

माँ ने रात की पूजा के बारे में पूछा। वहाँ के बारे में बताने में रिनियाँ को जी नहीं लगा। माँ से बोली–माँ, पैसे दो न, बाबा के लिए गोली ला देती हूँ।

किससे लोगी? ब्रजेश से? दुकान खोल दी है उसने? वह तो नौ बजे दुकान खोलता है।

कितना बजा है, देख कर आती हूँ।–रिनियाँ उठकर सड़क पर गई। एक घड़ीवाले से समय पूछा। अभी आठ ही बजे थे।

रिनियाँ लौट आई। माँ से बोली-अभी आठ ही बजे हैं। बाबा के लिए क्या खाना बनाओगी?

खाएगा कि नहीं खाएगा, पूछो न। रात में भी नहीं खाया था। बेलावाली को चिंता थी कि बुढ़वा खाना क्यों नहीं चाहता।

रिनियाँ मचान के पास आई और जोर से पूछा–बाबा, हौ बाबा! सो गए क्या?

गुलो ने कोई जवाब नहीं दिया। रिनियाँ ने कंधा पकड़कर हिलाया बाबा!

कुछ नहीं। कहीं कुछ भी नहीं।

अरी माँ, दौड़ो, देखो बाबा को क्या हो गया है। हौ बाबा! बाबा हौ बाबा!

रिनियाँ आर्तनाद कर उठी।

सभी दौड़ पड़े। किसी अनुभवी ने नाड़ी टटोली, छाती देखी, साँस देखी और बोला–हंसा उड़ गया।

चतुर्दिक मृत्यु का हाहाकार फैल गया। हवा में क्रंदन और विलाप का स्वर लहरा रहा था।

रिनियाँ बेहोश हो गई। उसके दाँत पर दाँत बैठ रहे थे।

गुलो को देखने के लिए डॉक्टर मलिक आए। एक मिनट तक एकटक देखते रहे।

रे गुलबा! अब कौन मुझे मालिक कहेगा रे! इतना कहकर डॉक्टर रोने लगे।

अर्जुन रिक्शा लेकर निकल गया था। पिंटू उसकी खोज में निकला। पिंटू और अर्जुन दोनों साढ़ू हैं। दोनों का घर थोड़ी दूरी पर है। पिंटू भी रिक्शा चलाता है और दारू पीता है। पिंटू ने रुनियाँ को फोन किया। महेंदर को खबर दी। अर्जुन सुपौल रेलवे स्टेशन के पास मिला। पिंटू उसे साथ लेकर लौटा।

सभी आ गए थे। अर्थी के लिए बाँस आ गया था। कफन आ गया था। अब लकड़ी कैसे खरीदी जाएगी? किसी के पास पैसे नहीं थे। न बेलावाली के पास, न अर्जुन के पास और न ही कंदहावाली के पास।

बेलावाली को पता था, कभी-कभार गुलो छिपाकर पैसे रखता था। इसलिए वह कोने-कोने में ढूँढ़ने लगी। तकिया में ठुसे हुए फटे-पुराने कपड़े निकालने लगी। लेकिन कहीं कुछ नहीं मिला। कौन देगा लकड़ी के लिए पैसा? किसी ने कहा, अरे मिट्टी में गाड़ ही दो न। क्या होगा?

ठीक है। ले चलिए। गाड़ ही देंगे।–अर्जुन ने कहा।

गुलो की अर्थी उठी। साथ में पाँच-सात लोग थे। कठियारी जाने के लिए किसी को कहा भी नहीं। कठियारी का भोज करना पड़ता। कहाँ से करेगा भोज?

गजना नदी के तट पर कब्रगाह और श्मशान, दोनों अगल-बगल ही हैं। गुलो को श्मशान की तरफ रखा गया। कब्र के टीले से अलग समतल जमीन पर। अर्थी जैसे ही रखी गई कि भूकंप आ गया।

अरे बाप! भूकंप हो रहा है हो!–परमेश्वर ने कहा। जो खड़े थे,

वे गिरने लगे, तो बैठ गए। धरती पर हाथ रख दिया। गजना के पानी में तरंगें उठीं। टोले पर हल्ला हो रहा है। सबके मन में डर बैठ गया। पता नहीं, क्या होगा। धरती से गों-गों की आवाजें आ रही हैं। सबको अपने प्राणों का डर था। एक मिनट के बाद धरती स्थिर हुई, तो सबको गाँव पर अपने परिजनों की चिंता हुई। पता नहीं, बाल-बच्चे कैसे हैं? घर है या गिर गया? परमेश्वर को इच्छा हुई कि जाकर देख आए। लेकिन श्मशान से ऐसे कौन लौटता है?

जो होना था हो गया। अब जल्दी-जल्दी गड्ढा खोदो।–परमेश्वर बोला।

दो कुदालें थीं, दो आदमी गड्ढ़ा खोदने में जुट गए। एक व्यक्ति ने अर्थी से बंधी गुलो की लाश को खोला। भूकंप फिर आया। डर के मारे सभी बैठ गए। धरती आधे मिनट तक थरथराती रही।

टोले पर से एक आदमी आया और बोला–टीवी में समाचार दिया है कि नेपाल में बहुत से लोग मारे गए हैं। बहुतेरे मकान गिरे हैं। अभी और भूकंप आएगा।

सबके मन में आतंक समा गया। गड्ढा खोदनेवाले से परमेश्वर ने कहा–रे उतना ही खोदो, जितने मे ठठरी समा जाए। ज्यादा खोद कर क्या होगा?

गड्ढ़ा खुद गया, तो सबने मिलकर गुलो के शरीर को उसमें उतार दिया। अब मुखाग्नि दी जाती कि तभी दो मोटरसाइकिल वाले आए। दोनों नेता थे–कन्हैया और जगदीश। कन्हैया ने कहा–अच्छा हुआ, जो मुखाग्नि नहीं दी। लाश को निकालो। ठेला पर लादकर अस्पताल ले आओ। वहाँ पोस्टमार्टम होगा। भूकंप का हर्जाना मिलेगा। चार लाख रुपए। जल्दी ले चलो। कहना भूकंप से मरा है।

सभी अकबकाए से खड़े रहे। ऐसा भी कहीं हुआ है। श्मशान से कहीं मुर्दा लौटता है! भारी असमंजसवाली बात। गुलो तो भूकंप से मरा भी नहीं। वह तो आठ बजे ही मर गया और भूकंप आया ग्यारह बजे।

उन सब को असमंजस में देख जगदीश गरजा–अरे, धर्म-कर्म और सत्य का ठेका तुम्हीं लोगों ने लिया है? इस संसार में क्या नहीं होता है! कौन कहेगा कि गुलो भूकंप में नहीं मरा है? मैं तो कहूँगा कि गुलो

को तुमने ही मारा है। मैंने मारा है। पूरे संसार ने गुलो को मार दिया है। यह भूकंप संसार से अलग है क्या?

अर्जुन ने साहस दिखाया। परमेश्वर से बोला–मौसा! ठेलावाले को पैसा कहाँ से देंगे?

परमेश्वर क्या जवाब देता। वह तो अपनी दवा भी उधार ही लेता है। दोनों को कानाफूसी करते देख कन्हैया ने पूछा–क्या बात है रे?

परमेश्वर ने जवाब दिया ठेले के लिए पैसा नहीं है।

कन्हैया ने पाँच सौ रुपए का एक नोट निकालकर देते हुए कहा–जल्दी लेकर आओ। हम सब अस्पताल में ही रहेंगे।

परमेश्वर ठेला लाने गया। जो वहाँ रह गए, उन्होंने गड्ढे से गुलो को बाहर निकाला। कफन उतारा। धोती-बनियान फिर से पहनाए। देह में लगी मिट्टी को साफ किया। छोटुआ और बिजला को पहरे पर बिठा दिया और लाश लेकर अस्पताल चले गए।

वहाँ हल्ला था कि सुपौल जिले में भूकंप से तीन लोग मारे गए। उन तीन में से एक गुलो भी था। कन्हैया और जगदीश ने जल्दी से सब कुछ करवा दिया। लाश को फिर से श्मशान लाने में शाम हो गई। कठियारी सब भूख से लहालोट हो गए थे। गुलो के कपड़े उतारे गए। कफन ओढ़ाकर गड्ढे में डाल दिया गया। छोटुआ ने मुखाग्नि दी। कुदाल चलानेवाले दोनों लोगों ने गुलो को मिट्टी से ढक दिया।

कुछ बच्चे और स्त्रियाँ तमाशा देख रहे थे। वे सब मुसलमान थे। एक मुस्लिम महिला ने दूसरी से कहा–ये लोग हिंदू हैं कि मुसलमान? आग भी दे रहे हैं और दफना भी रहे हैं।

दूसरी ने कहा–या अल्लाह! तुमने देखा नहीं। एक बार गाड़ के ले गया और फिर से गाड़ा है। शायद पैसे मिलेंगे। हिंदुओं का भी कोई धरम होता है! मरे हुए इंसान की ऐसी बेइज्जती! अल्लाह हो अल्लाह!

तीसरी मुस्लिम महिला ने कहा–धरम को लेकर क्या होगा? पैसे मिलेंगे, तो बाल-बच्चे भी गुजर करेंगे।

अर्जुन और छोटुआ किसी के नलकूप पर नहाकर घर लौटे। छोटुआ भूख से बेहाल हो गया था। माँ से बोला, कुछ खाने दो।

देखो, बोलता क्या है। अरे तू कर्ता है। तुझे अरबा-अरबाइन खाना

पड़ेगा। थोड़ा रुक जाओ।–बेलावाली ने कहा।

वह सब मैं नहीं जानता। मुझे खाने के लिए दो।–छोटुआ ने माँ का कंधा झिंझोड़ दिया।

देखो तो, अरे रुको न। अभी किसी ने खाया है? सभी भूखे हैं। चिवड़ा-चीनी मंगा दे रही हूँ। और लोगों के लिए लिट्टी मंगा रही हूँ।

मैं चिवड़ा नहीं खाऊँगा। मैं भी लिट्टी ही खाऊँगा।

बेलावाली ने छोटुआ से बहस नहीं की। वार्ड कमिश्नर पंद्रह सौ रुपए दे गया था। सावधानी से सौ रुपए का एक नोट निकाला। उमेश से लिट्टी देने के लिए कहा। डोमा की दुकान से चिवड़ा-चीनी खरीदे।

रिनियाँ ने परोसकर छोटुआ को दिया। छोटुआ मुँह फुलाए बैठा रहा। नहीं खाया। जैसे ही लिट्टी आई कि एक लपक ली। सब मना करते ही रह गए, छोटुआ ने किसी की न सुनी और खा गया।

यह लड़का बकलेल है। देवता-पित्तर कुछ भी नहीं समझता है।–रिनियाँ बोली।

ऐ छोकरी, चुप रहेगी?–छोटुआ ने गुस्से में कहा।

हे देवता, माफ करना। नहीं समझता है, अबोध है। बेलावाली ने गुहार लगाई।

हाँ, हाँ, बड़ा अबोध है!–रिनियाँ ने तंज कसा।

छोटुआ थोड़ी देर काठ बना रहा, फिर दूसरी लिट्टी लेकर खाने लगा। किसी ने कुछ नहीं कहा। जैसे एक खाना, वैसे ही दो खाना।

तीसरे दिन सांसद आई। बेलावाली के हाथ में पाँच हजार रुपए दिए। जमीन और घर दिलाने का आश्वासन दिया।

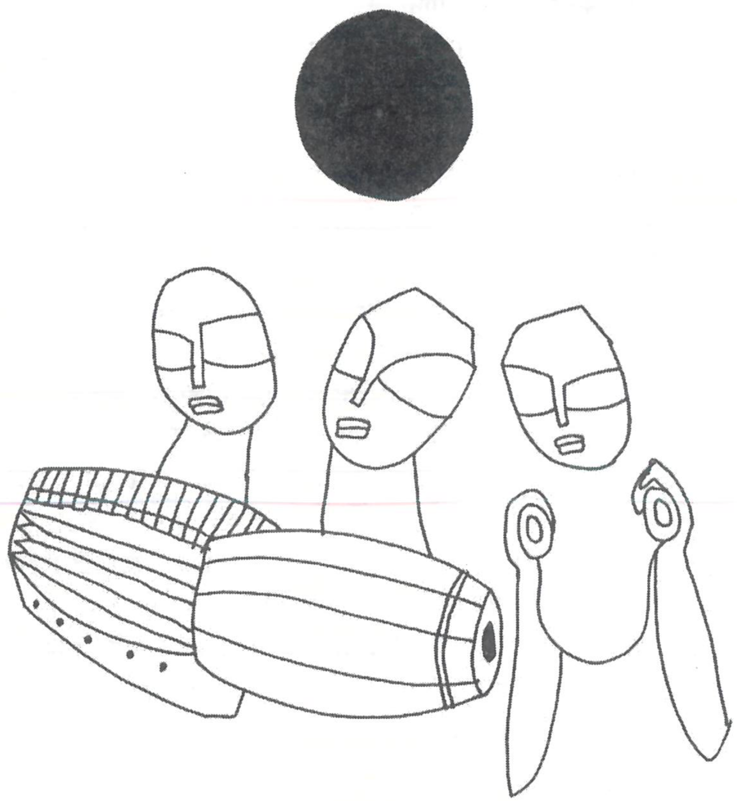
चौथे रोज एक मंत्री दस हजार रुपए दे गया। उसे एक छोटे से बटुए में डालकर बेलावाली ने अपने आंचल में बाँध लिया। इन रुपयों ने उसे भारी चिंता में डाल दिया है। बटुआ कहीं गिर न जाए, कोई ले न जाए–यही बात हमेशा उसके दिमाग में चक्कर काटती रही।

लाओ न, रख देता हूँ।–अर्जुन ने कहा।

बेलावाली की इच्छा हुई कि उसे ही दे दे। फिर लगा, नहीं। इस लड़के का कोई ठिकाना नहीं है। पीकर उड़ा देगा। अब तक तो तीन सौ रुपए लेकर पी चुका है।

शाम में महेंदर आया और बोला–ये रुपए भोज के लिए रख दो। लेकिन यहाँ रखना ठीक नहीं है। न किवाड़ है, न फाटक है। रात-बिरात कोई छीन-झपट लेगा। लाओ, ले जाता हूँ। रखा रहेगा। जब जितने की जरूरत होगी, ले आना।

महेंदर रुपए लेकर चला गया। बेलावाली की जान छूटी। लेकिन कुछ ही देर बाद उसे शंका होने लगी। पता नहीं, महेंदर क्या करेगा? रुपए लौटाएगा या नहीं? खर्च कर लेगा या हजम कर जाएगा? महेंदर का क्या विश्वास? वह तो ठग है। ठगकर जमीन लिखवा ली। पता नहीं उसके मन में क्या आया कि उसने उसे रुपए दे दिए। बेलावाली पछताने लगी। उसे लगने लगा, जैसे किसी ने कुछ छीन लिया हो।



रिनियाँ को पता चला, तो उसने कहा–दिया ही क्यों? तुम तो खुद ही बेवकूफ हो। रात भर में उड़ा नहीं देगा। मैं सुबह ही ला दूँगी। तुम चिंता मत करो।

बेलावाली को अनवर ने कहा–जो रुपए पैसे मिल रहे हैं, उन्हें ब्रजेश के पास जमा करते जाइए। वह ईमानदार है। बेईमानी नहीं करेगा। पास में भी है। जब जो जरूरत पड़ेगी, ले लीजिएगा। यहाँ समाज के भी दस लोग हैं। सबकी नजर में रहेगा। पैसा डूबेगा नहीं।

रिनियाँ सुबह ही महेंदर के पास पहुँची और बोली भैया, रुपए दीजिए।

क्या हुआ? विश्वास नहीं रहा। मैं अपना नहीं हूँ? पराया हूँ? ठीक है, ले जाओ, अभी तुरंत ले जाओ।–महेंदर उठा और बटुआ लाकर रिनियाँ को पकड़ा दिया गिन लो।

महेंदर गुस्से में था। रिनियाँ को कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि क्या कहे। फिर वह बोली–माँ ने कहा, ले आओ। खर्च तो होता ही रहता है।

महेंदर कुछ नहीं बोला। उसका मन खट्टा हो गया था।

ब्रजेश रुपए रखने के लिए तैयार नहीं था। लोगों ने जोर डाला, तो रख लिया।

दोपहर में कन्हैया के साथ सरकारी आदमी आया। बेलावाली को चार लाख रुपए का चेक दिया।

कन्हैया ने कहा–अब तक किसी को नहीं मिला है। सब से पहले आपको ही मिला है। वह भी मैंने ही भागदौड़ की, लगा रहा इसलिए मिला है। इसे ठीक से रखे रहिए। कल बैंक में जमा करा दूँगा। रुपए दो-तीन दिन में खाता में आ जाएँगे।

बेलावाली बड़ी देर तक चेक को उल्टा-पुल्टाकर देखती है। फिर रिनियाँ से पूछती है–अरी, इसमें लिखा क्या है?

अंग्रेजी में कुछ लिखा है। रख दो न। खो जाएगा। नहीं तो लाओ, ब्रजेश को दे आती हूँ।–रिनियाँ चेक ब्रजेश को दे आई।

बुढ़वा शायद कुछ जानता था, इसलिए तो उतनी ठंड में भागदौड़ कर रहा था। मुझे भी ले गया था। तब जाकर खाता खुला था। जनधन

बैंक ही है न?–बेलावाली बड़ी बेटी रुनियाँ से पूछती है।

मुझे क्या पता। बैंक ही होगा।–ठीक से रुनियाँ को भी पता नहीं था।

माँ, ब्रजेश ने पासबुक माँगा है।–रिनियाँ माँ से कहती है।

खोजकर दे आओ न।–माँ कहती है।

रिनियाँ ने पासबुक खोजा और ब्रजेश को दे आई। माँ से बोली–कहा है, कल जमाकर देगा।

आज अर्जुन रंग में है। अब उसे किसी का डर नहीं है। माँ से सौ रुपए टान ले गया। दारू पीकर चौक पर हंगामा कर रहा है।–मेरे बाप की तरह किसका बाप है। बड़का-बड़का एमपी, मिनिस्टर का लाइन लगा दिया। कितने ही लोगों का बाप मरा। इतना घोड़ा-गाड़ी किसी के दरवाजे पर आया?

नहीं रहा गया, तो किसी ने कहा–रे समाज नहीं रहता, तो सारी ऐंठन घुसड़ जाती।

के बोला रे? कौन समाज हमरा लिए क्या करता है रे? साला! हम अपना बाप का खाता है। अपना बाप का पीता है। दूसरा का क्यों फटता है!–अर्जुन बीच रोड पर गिर जाता है। दो लोग उठाकर घर पहुँचा जाते हैं।

कन्हैया सुबह-सुबह ही बेलावाली के यहाँ पहुँचा–लाइए, चेक दीजिए। जमा कर देता हूँ।

चेक तो ब्रजेश को दे आई!–बेलावाली को डर हुआ।

दिलाया मैंने और दे आईं उसे।–कन्हैया गुस्से में बोला और तुरंत ब्रजेश के पास गया।

ब्रजेश यह बात सभी जानते हैं कि मेरे ही कारण गुलबा के परिवार को चार लाख रुपए का चेक मिला है। मैं नहीं रहता तो गुलबा तो भूकंप से पहले ही मिट्टी तले चला जाता। मैंने ही उसे ठेले पर लदवाया। ठेले के लिए पाँच सौ रुपए दिए। श्मशान से अस्पताल ले गया। पोस्टमार्टम करवाया। ऑफिस में भागदौड़ की। किरानी और हाकिम को घूस दिया।

तब जाकर मिला है। वैसे नहीं मिल गया। इसलिए उसमें मुझे भी हिस्सा चाहिए। मुझे भी एक लाख रुपए चाहिए।

ठीक है। आपने ही दिलवाया। तो यह बात तो उसके परिवार को बताइएगा न! मेरा तो है नहीं, जो मैं आपको दे दूँगा। परिवार कह देगा, तो आप एक क्या चारों लाख ले लीजिएगा।–ब्रजेश ने तर्क दिया।

वही। बता दिया है। मेरी माँग गैर-मुनासिब नहीं है। इतना परिश्रम किया है, इतना खर्च किया है। एक लाख तो मेरा वाजिब हक है।–यह कहते हुए कन्हैया उठकर चला गया।

अनवर सुन रहा था। आकर बेलावाली से बोला–गिद्ध मँडरा रहा है। बचकर रहना।

अनवर क्या कह रहा है, बेलावाली कुछ समझ नहीं पाई। बकर-बकर उसका मुँह ताकती रही।

अर्जुन जो रात में दारू पीकर सोया, तो आज दोपहर में उठा है। फिर नहाया, खाना खाया और माँ के पास आकर बोला–रुपए दो, रिक्शा खरीदूँगा।

कौन से रुपए दूँगी? रखने के लिए दिया था?–बेलावाली को गुस्सा आया।

दस हजार रुपए जो मिले, वह निकालो।

वह तुम्हें दे दूँ? और भोज-भात नहीं करूँ?

चार लाख मिलेंगे न? उसमें से करना।

और बहन की शादी नहीं करोगे? घर नहीं बनाओगे?

विवाह में उतना लगेगा?

बच जाएगा, तो ले लेना।

मैं यह सब नहीं जानता। तुम खर्चकर दोगी। मुझे अभी ही दे दो। नहीं तो कदम का पेड़ बेच लूँगा।

कितनी बार विपत्ति आई, लेकिन इन दोनों पेड़ों को बुढ़वा ने नहीं बेचा। रिनियाँ की शादी के लिए रखा था। और तुम कह रहे हो बेच लूँगा?

सब चीज तुम रिनियाँ के लिए ही रखोगी? सिर्फ रिनियाँ ही बाप की बेटी है? मैं बाप का बेटा नहीं हूँ? बड़ा पेड़ मेरे हिस्से में है। उसे मैं बेच लूँगा।

जरा भी लाज-शर्म है कि नहीं? बाप का क्रिया-कर्म भी नहीं हुआ है और तुम बाँट-बखरा करने लगे हो।

सुजीत खड़ा होकर दोनों माँ-बेटे का बकझक सुन रहा था। हठात बोल उठा–एक पेड़ मैं भी लूँगा।

रिनियाँ बहुत उदास है। बाबा की याद आ रही है। कहाँ चले गए हो बाबा? अब नहीं मिलोगे? बाबा को देखने के लिए मन व्याकुल है। मचान के पास जाती है। सुन्न अखरा मचान। बाबा नहीं हैं। बाबा की कोई भी चीज नहीं है। न टाट में टँगी कमीज। न मचान से टिकी लाठी। न नीचे में रखा लोटा। कहीं कुछ नहीं है। घर उदास लग रहा है। एकाएक रिनियाँ को लगा जैसे बाबा ने पुकारा है–दाय गे।

कहाँ हैं बाबा? यहाँ तो कोई नहीं है! तब किसने उसे पुकारा? आवाज तो बाबा की ही थी। रिनियाँ की इच्छा हुई, जवाब दे क्या कह रहे हो बाबा?

उसके दिमाग में बाबा की पुकार चक्कर दे रही है। दाय गे! कितनी साफ आवाज थी। लगता है जैसे बाबा ने सच में मचान पर से आवाज दी हो दाय गे! कितनी लाचार, बेबस, आर्त्त पुकार! उस पुकार में कितना दर्द, कितना स्नेह और कितनी करुणा थी! अब उस तरह कौन पुकारेगा?

उसकी इच्छा हुई कि वह पुकारे बाबा! ओ बाबा!

घुटने पर सिर झुकाए रिनियाँ मचान पर बैठी हुई है। लगता है, जैसे बाबा फिर पुकारेंगे। वह कान लगाए हुई है। लेकिन पुकारेगा कौन? बाबा तो चले गए। रिनियाँ रोती है।

•••



विपन्नता के छोर पर खड़े आदमी की गाथा

सुभाष चंद्र यादव मैथिली के ऐसे पहले रचनाकार हैं, जिन्होंने मैथिली भाषा और साहित्य को एक ऐसी जमीन दी है, जो वास्तविक अर्थ में जनपद की जमीन है। अपने आभिजात्य और तत्संबंधी दर्प और गरिमा से लैस पंडित वर्ग की मैथिली के लिए सुभाष की मैथिली चुनौती की तरह खड़ी हो गई और अब भी वह विशद विवेचना की माँग करती है। अभिजन की भाषा के समानांतर एक ऐसी भाषा खड़ी हुई, जो गरीबों, अनपढ़-गँवारों और जनपद के सच्चे-सीधे लोगों की भाषा है। एक ऐसी भाषा, जिसमें उनके सुख-दुख, हर्ष-उल्लास, राग-विराग, कामना, गरीबी, आपद-विपद व्यक्त होते हैं। यह एक ऐसी मैथिली है, जिसे बड़े-बड़े चंदन-तिलक करनेवाले भाषा को दूषित करना मानते हैं। लेकिन वास्तविकता इससे अलग है। मैथिली की कहानियाँ सुभाष के माध्यम से पहली बार इस भाषा की सुगंध और सुवास के स्पर्श से परिचित हुईं। कभी-कभी अन्य कथाकारों की भाषा में भी ऐसी बानगी देखने को मिलती है, लेकिन अपने समग्र और विशिष्ट रूप में यह सुभाष के ही कथा-संसार में प्रकट हुई है।

यह आकस्मिक नहीं है। याद करना चाहिए महाकवि विद्यापति को, जब वे कहते हैं—देसिल बयना सब जन मिट्ठा। आखिर यह देसिल बयना क्या है, यह बताने की जरूरत नहीं है। मुट्ठी भर लोगों से जनपद का निर्माण नहीं होता है। और सुभाष उस जनपद का किस्सा सुनाते हैं, जो अपनी संपूर्ण गरिमा में मिथिला का जनपद है। अपने संघर्ष, अपने भाषा-संस्कार, अपनी सभ्यता-संस्कृति से लैस। सुभाष चंद्र यादव पर लिखते हुए मुझे बार-बार हिंदी के महान कवि त्रिलोचन की यह पंक्ति याद आती है—उस जनपद का कवि हूँ, जो नंगा है, भूखा है, दूखा है। हम सब जानते हैं कि जनता कभी पराजित नहीं होती है। बड़ी से बड़ी विपत्ति को सहन

करते हुए वह जीती है। विपत्तियों से जूझती है। श्रम करती है और श्रम की मुग्धकारी सुगंध से एक अद्भुत संसार रचती है। सुभाष इस श्रम और इस सुगंध से परिचित हैं और इस श्रमशील जनपद की महागाथा को कभी कहानियों में, तो कभी उपन्यास में व्यक्त करते हैं।

सुभाष चंद्र यादव की असली पहचान यही है। साधारण वेशभूषावाले लोग, साधारण जीवन जीते हुए जिस भाषा का प्रयोग अपने घर-आँगन में करते हैं, अपने सुख-दुख में करते हैं, सुभाष की रचनाओं में वही भाषा स्वतःस्फूर्त रूप में आती है। इसके लिए सुभाष कोई प्रयास नहीं करते हैं, बल्कि यह सहजता के साथ आती है। यही सहजता सुभाष की निजता भी है और विशिष्टता भी।

सुभाष स्वयं भाषाविद् हैं, अनेक भाषाओं के ज्ञाता हैं। बहुत गंभीरता के साथ अनेक देसी-विदेशी भाषाओं का ज्ञान अर्जित किया है। इसलिए अपने रचना-संसार में वह भाषा संबंधी कोई चूक नहीं होने देते हैं। उनके भीतर मिथिला के सामान्य लोगों के हृदय और मन-मस्तिष्क में धड़कती हुई भाषा का जो संसार निर्मित है, वह अपनी कथा-रचना में उसे व्यक्त करते हैं और यही उनका श्रेय है।

सुभाष ने जिस समाज में अपना संपूर्ण जीवन जिया है, जिस समाज के सुख-दुख में सहभागी रहे हैं, उस बहुसंख्यक समाज की जीभ पर जो भाषा मचलती रही है, उसे व्यक्त करनेवाले कथाकार सुभाष अपनी भाषा का कोई दर्प नहीं रखते हैं। भाषा उनकी रचना में सहज संस्कार के रूप में व्यक्त होती है।

मुझे यह मानने में कोई हिचक नहीं है कि मैथिली साहित्य में सुभाष ने पहली बार विराट फलक पर उस जनपद की भाषा का रूप-दर्शन कराया है, जो अब तक साहित्य प्रदेश के लिए वर्जित और निषिद्ध था। साहित्य के क्षेत्र में इस प्रकार के क्रांतिकारी और आवश्यक परिवर्तन के लिए सुभाष सदैव याद किए जाएँगे।

'गुलो' नामक उपन्यास में सुभाष का भाषा संबंधी यह सौंदर्य अपनी संपूर्ण आभा और निखार के साथ प्रकट हुआ है और पहली बार आखिरी विपन्न मनुष्य तथा उसकी भाषा-साहित्य में सत्तासीन हुए हैं।

कोई-कोई कृति चमत्कृत कर देती है, बाहर-भीतर हर तरफ। जो लोग सुभाष चंद्र यादव की रचनात्मकता से परिचित हैं, उन लोगों को

उनका यह नया और पहला उपन्यास गुलो अद्भुत लगेगा। शीर्षक तक में संक्षिप्तीकरण की मौलिक पहचान। यह उपन्यास चमत्कृत तो करता ही है, कभी अवाक भी कर देता है। और यह तब घटित होता है, जब पाठक उपन्यास में उतरता है। एक नया और ताजा परिदृश्य सामने में पसरा मिलता है। थोड़ा सा परिचित, थोड़ा सा अपरिचित। अपरिचय का यह संसार तुरंत ही परिचय में बदल जाता है और बहुत अपना और आत्मीय सा लगने लगता है।

कुछ किताबें इतिहास बदल देती हैं, परंपरा का इतिहास। वे आत्मावलोकन के लिए आलोड़ित-विलोड़ित करती हैं और अपने नए परिवेश, नए आँगन में सीधे प्रवेश करने का आमंत्रण देती हैं। पारंपरिक ज्ञान के बंधन को तोड़ती हैं, अतिक्रमित करती हैं और नई बहस, नए विमर्श, नई आलोचना की माँग करती हैं। कुछ किताबों के लिए नए भाषाशास्त्र, नए आलोचनाशास्त्र का निर्माण करना पड़ता है।

'गुलो' ऐसा ही उपन्यास है। सब कुछ शांत, सब कुछ स्थिर। लेकिन पहाड़ी नदी की तरह वेगवान। नदी का यह वेग पाठक अपने हृदय में महसूस करता है। गुलो सामान्य जनजीवन से उठाया गया एक पात्र है। यह संपूर्ण उपन्यास गुलो और उसके विस्तृत परिवेश की कथा कहता है। गुलो का परिवार, गुलो के सगे-संबंधी, गुलो का परिचित और आसपास का संसार-यही इस उपन्यास के मूल में है।

गुलो दुख-दरिद्रता का मारा है। उसके छोटे-छोटे दुख, उसके छोटे-छोटे सुख और उसकी दुनिया की निजता इस उपन्यास में व्यक्त हुए हैं। गरीबी और अंतहीन विपत्ति, उसे कभी-कभी बेईमान भी बना देती है। लेकिन यह ऐसी बेईमानी है, जिससे मनुष्य अपने अस्तित्व की रक्षा करता है।

उपन्यासकार ने जिस परिवेश का चित्रण किया है, वह इतना परिचित और आत्मीय बन पड़ा है कि उसके रेशे-रेशे की महीन बुनावट तक उभर कर पाठकों के सामने आ जाती है। गाँव-घर का ऐसा आत्मीय और सहज चित्रण दुर्लभ है। यह उपन्यासकार की निजता और विशिष्टता है। वे ऐसे ही पात्र और परिवेश का चयन करते हैं, जो उनके अंतस्तल में रचे-बसे हैं।

एक उदास, करुण और निर्गुण राग में बहता यह उपन्यास जीवन के यथार्थ को उजागर करता है। जहाँ जीवन है, जहाँ जीवंतता है, पात्रों में प्राण रचे-बसे हुए हैं, लेकिन आर्थिक विपन्नता के कारण सब कुछ बिखरा

हुआ है। मिथिला के सामान्य जनजीवन की अधोगति की महागाथा बन गया है यह उपन्यास।

मिथिला के एक विशिष्ट पर्व तिला संक्रांति से यह उपन्यास आरंभ होता है और शीघ्र ही सामान्य जनजीवन के दैनिक प्रवाह के पास पहुँच जाता है। पर्व का उत्साह और उमंग उन लोगों के लिए है, जिनमें सामर्थ्य है। उनके लिए क्या, जिनका सब कुछ उपवास और उधार पर ही चलता है—लाइ बनाने में बहुत खर्चा है। पैसे नहीं हैं कि बना सके।

गुलो, जो इस उपन्यास का मुख्य पात्र है, हमेशा अथाह चिंता में पड़ा रहता है। जीवन का जोड़-घटाव-गुणा-भाग करते हुए उसका जीवन चल रहा है। बपौती संपत्ति के नाम पर 'पुरखों का छोड़ा हुआ कुछ भी नहीं है। गुलो अथाह चिंता में पड़ा रहता है। उसे कभी किसी ने हँसते हुए नहीं देखा होगा।' उपन्यास की यह पंक्ति कितनी मर्मांतक है! यह पंक्ति एक ऐसी पीड़ा को जन्म देती है, जिसका विश्लेषण कठिन है। जीवन से हँसी कहाँ गायब हो गई है। हँसी को तलाशना, उसकी चिंता करना और उस परिस्थिति का आकलन करना, जिससे मनुष्य की प्राकृतिक हँसी तक छिन गई है, उपन्यासकार की चिंता बन गया है।

गुलो की बेटी रिनियाँ की सुंदरता और उसके उन्मुक्त चरित्र का कितना मोहक वर्णन किया गया है—लेकिन रिनियाँ तो गजब है। हँसती है, तो लगता है, फूल झड़ रहे हों। फूल की तरह ही उज्ज्वल हँसी। रिनियाँ की हँसी में जादू है। चुंबक की तरह आकर्षित करती है। निश्छल निर्मल हँसी। चाँदनी की तरह छिटकती हुई।

स्त्री विमर्श के इस दौर में, जहाँ अनेक घटनाओं-दुर्घटनाओं, हत्या, बलात्कार का साक्षी बनता है मौजूदा समय, वहाँ दीन-हीन-लाचार गुलो का यह कथन कितना महत्त्वपूर्ण हो उठता है, जब उसका भांजा अपनी नवविवाहिता कुरूप दुल्हन के बारे में कहता है—'लड़की की लोग निंदा करते हैं।' गुलो उसे फटकारते हुए कहता है—'खबरदार! ऐसी भाषा मत बोलो। जिसका हाथ थामे हो, घर लाए हो, उससे बढ़कर और कोई नहीं। वही घर की लक्ष्मी है...।' यह वैचारिकता गुलो के व्यक्तित्व की दृढ़ता है, जो उसे महत्त्वपूर्ण बनाती है। अक्सर देखा जाता है कि तथाकथित भद्र समाज में दहेज के लिए, दुल्हन की कुरूपता के कारण अथवा ऐसे अनेक कारणों से स्त्रियों को जीते-जी आग में जला दिया जाता है, घर

से भगा दिया जाता है, पीड़ित-प्रताड़ित किया जाता है, लेकिन गुलो और गुलो जैसे जीवन जीनेवाले बहुसंख्यक समाज में ऐसी अमानवीय दुर्घटना कम होती है। यही जीवन की महानता है। जीवन जीने की महानता है। गरीबी, विपन्नता और आर्थिक दुश्चिंता में पड़े इस समाज की जीवन-शैली, स्त्री के प्रति आदर-मान और निरंतर लड़ते-झगड़ते, फिर से सहज और सामान्य जीवन जीने की ललक इस निम्नस्तरीय समाज को महत्त्वपूर्ण बनाती है। जीवन जीने की निरंतरता इस समाज को हर तरह की कुरूपता और विद्रूपता से बचाती है। इस तथ्य को उपन्यासकार ने बहुत सहजता से चित्रित किया है।

यह उपन्यास उस समाज की कहानी है, जहाँ श्रम को सर्वाधिक महत्त्व दिया जाता है और अनथक श्रम के कारण ही लोगों का जीना संभव हो पाता है। गुलो का छोटा बेटा छोटुआ, बेटी रिनियाँ, बहू कंदाहावाली और पत्नी बेलावाली सभी अपने-अपने हिस्से का श्रम करते हैं और जीवन निर्वाह करते हैं।

अपने भांजे की शादी में जब गुलो बेटी रिनियाँ के साथ जाता है, तो वहाँ बड़ी बेटी रुनियाँ भी आई हुई होती है। रुनियाँ जिद करती है कि उसकी छोटी बहन थोड़े दिनों के लिए उसके साथ उसकी ससुराल जाए, लेकिन रिनियाँ नहीं जाती है और कहती है—'मैं नहीं जाऊँगी बहन। लोग कहेंगे पेट पालने के लिए आई है। बाप बीमार हो गया, दुर्दिन आ गया, इसलिए न तुम जाने के लिए कह रही हो? नहीं जाऊँगी बहन, नहीं जाऊँगी।'

गुलो उसकी बातें सुनकर हैरान रह जाता है। आखिर इतनी छोटी उम्र की रिनियाँ दुनियादारी की इतनी बातें कैसे जानती है। यह बात निर्विवाद है कि जीवन का अनुभव बुद्धि और ज्ञान में वृद्धि करता है और उसे ठोस बना देता है। रिनियाँ अपनी पारिवारिक दुनिया से परिचित है और अत्यंत व्यावहारिक है। यह व्यवहार उसके चरित्र में दिखाई देता है।

रिनियाँ ने सरकारी लाभ के लिए स्कूल में दाखिला कराया है, इसलिए पोशाक राशि के लिए उसे पाँच सौ रुपए भी मिलते हैं, लेकिन गुलो रुपए खर्च कर देता है। रिनियाँ को उसमें से एक रुपया भी नहीं मिल पाता है। घर-गृहस्थी की चिंता-दुश्चिंता में पड़ा गुलो रुपए का उपयोग घर की अन्य जरूरतों के लिए करता है। जहाँ पेट भरना और किसी तरह जीवन

जीने के लिए प्रयास करना पड़ता हो, वहाँ बाल-बच्चे की पढ़ाई-लिखाई की प्राथमिकता बदल जाती है। पहले अस्तित्व रक्षा, पहले पेट, पहले भूख-यही जीवन की प्राथमिकता बन जाती है। रिनियाँ को जब पाँच रुपए भी उसका पिता नहीं देता है, तो वह गुलो को आड़े हाथों लेती है। गुलो के लिए ऐसी स्थिति सहज है। वह अक्सर ऐसे बोल—कुबोल सहने और सुनने का अभ्यासी हो चुका है।

सामान्य आदमी का जीवन अद्‌भुत होता है। विवाह में रिनियाँ सोनक गई थी, जो एक निरा देहात है। वहाँ से लौटने के बाद वह एक-एक किस्सा माँ और भौजाई को सुनाती है। उसने रेलगाड़ी देखी तक नहीं है, चढ़ने की बात तो दूर रहे। सोनक उसे किसी तीर्थ जैसा लगता है। इक्कीसवीं शताब्दी के इस समय में ऐसे लोग भी हैं जो जीवन की गति-प्रगति से अपरिचित हैं। विस्मय से भरे ऐसे लोगों के जीवन की विडंबना समझी जा सकती है।

इस उपन्यास में अनेक पात्र हैं और सबके अपने-अपने विशिष्ट चरित्र हैं। चरित्र के स्तर पर उपन्यासकार एक ऐसी बारीक लकीर खींचते हैं, जो पात्र के सर्वांग को दर्शाती है। अनवर का चरित्र उपन्यासकार के एक ही वाक्य से स्पष्ट हो जाता है, जब वह सुखबा की माँ के इलाज के प्रति दिलचस्पी दिखाता है। अनवर को पता है कि बुढ़िया (सुखबा की माँ) के पास पैसा है। उसका कोई प्रयास निरर्थक नहीं होगा। वह बुढ़िया के इलाज में जो पैसा लगाएगा, उससे ज्यादा वसूल कर लेगा। इसलिए वह बुढ़िया की सेवा सुश्रुषा करता है और उसके पक्ष में खड़ा होता है। सबका अपना-अपना दुख-धंधा है, चतुराई है। सब कुछ इस उपन्यास में स्पष्ट है। कहीं कोई दुराव-छिपाव नहीं, कोई गोपनीयता नहीं। सब कुछ उघड़ा हुआ है, खुला है, पारदर्शी है।

आज का जीवन और आज का समाज बहुत कुछ भूल गया है अथवा आधुनिकता की चकाचौंध में भूल जाने का स्वांग करता है। हम सबकी आबादी का एक बड़ा हिस्सा जिस तरह का जीवन जी रहा है, सुभाष का 'गुलो' उसके जीवन की कथा कहता है। और वह इतनी सहजता के साथ, इतनी विश्वसनीयता के साथ कि पाठक इस उपन्यास को पढ़कर उस वास्तविक और सरल-सहज दुनिया को फिर से जानना चाहेगा, जो हमारे जीवन के समानांतर एक ऐसा भी जीवन इस मिथिला या भारतीय

भूखंड पर सांस ले रहा है और अपने अस्तित्व को बचाने के प्रयास में संघर्ष कर रहा है।

आजकल चुनाव में जिस तरह प्रचार-प्रसार, दाँव-पेंच, धूर्तता और षड्यंत्र किए जाते हैं, छोटे-छोटे प्रलोभन के बल पर जनतंत्र को नंगा किया जाता है, उसकी एक बानगी इस उपन्यास में दी गई है। लोग कैसे बिकते हैं और अपने गाँव-घर, टोले-मुहल्ले के लोगों की भ्रष्टता जिस तरह सामने आती है, उसे कम शब्दों में इस तरह व्यक्त किया गया है कि अत्यंत विश्वसनीय और यथार्थ लगता है। हमारी आपकी आँखों के आगे कोई घटना कैसे साकार होती है, कैसे वह स्वरूप ग्रहण करती है, इसकी बानगी इसमें देखी जा सकती है।

एक दोपहर रिनियाँ और कंदाहावाली में झगड़ा क्या होता है कि गुलो के परिवार का परिदृश्य बदल जाता है। सभी रूठे हुए। सभी अपने-अपने बिस्तर पर चले गए और भूखे सो गए। भूख से किसी को नींद नहीं आ रही थी, लेकिन सभी सोने का स्वांग कर रहे थे। लेकिन बेलावाली उठकर चूल्हे के पास सारी व्यवस्था करती है और कंदाहावाली से रोटी पका देने का आग्रह करती है। रोटी पकने के बाद सभी थोड़ा-बहुत खाते हैं और रात काटते हैं। बेलावाली की यह संवेदनशीलता अद्‌भुत है, क्योंकि वह जननी है। तथाकथित भद्र समाज में इतनी सी घटना क्या से क्या कर देती है, लेकिन सामान्य लोगों के घरों में ऐसी घटनाएँ अक्सर होती रहती हैं और फिर से एक सामान्य दिनचर्या शुरू हो जाती है। कंदाहावाली सुजीत को लेकर इस घटना के बाद अपने मायके चली जाती है और गुलो का परिवार सुन्न हो जाता है। दोनों की अनुपस्थिति से परिवार में जो शून्यता आती है, उसका वर्णन सांकेतिक अर्थ में जिस तरह किया गया है, वह अद्‌भुत है।

गुलो की बड़ी बेटी रुनियाँ का देवर नेरहू एक दिन के लिए आता है, तो रिनियाँ असमंजस में पड़ जाती है। अगर यह यहाँ मेहमानी करेगा, तो रहेगा कहाँ और सोएगा कहाँ? घर-दरवाजे खुले हुए हैं। नेरहू बोलता बहुत कम है, रिनियाँ की तरफ निहारता रहता है और मुस्कराता रहता है। मानो वह अपने मूक प्रेम का प्रदर्शन कर रहा हो। लेकिन रिनियाँ परिपक्व है और नेरहू का इस तरह ताकना उसे अच्छा नहीं लगता है, इसलिए वह अपनी माँ से जिज्ञासा करती है कि वह रहेगा या जाएगा? उसका चेहरा देखकर रिनियाँ को डर होता है।

समय बदलता है और कंदाहावाली एक नए रूप में लौटकर अपनी ससुराल आती है। संग में रहता है सुजीत। गुलो का घर फिर से गुलजार हो उठता है। कई महीनों से खराब नलकूप ठीक कराया जाता है, घर के ऊपर और टाट पर प्लास्टिक लगाया जाता है, बाजार से उबला हुआ चावल मंगाया जाता है। एक नए प्रकार के उत्साह और उछाह का संचार होता है। गुलो का टूटा-बिखरा परिवार एक सम पर आ जाता है। सब कुछ सुरुचिपूर्ण और व्यवस्थित। सुडौल। कभी-कभी छोटी-सी खुशी, कितने बड़े-बड़े दुख को दूर फेंक देती है। जीवन संभवतः इसी का नाम है। यह ऐसी दुनिया का सुख है, जिसे ऐसा ही जीवन जीनेवाले लोग महसूस कर सकते हैं। वैसे लोग नहीं, जो दुख, चिंता, व्यथा की पोटली बांध माथे पर उठाए चलते हैं सब दिन।

सुजीत जो एक छोटा सा बच्चा है, अनवर की दुकान पर पहले भी जाता था और बालसुलभ चंचलता के साथ बेपरवाह होकर उससे पैसे माँगता था। आज फिर वैसा ही दृश्य उपस्थित है। अपने ननिहाल से आने के बाद कुछ दिन में सुजीत का संकोच खत्म हो जाता है। वह अनवर के पास जाता है और अपनी हथेली फैलाकर कहता है—एइ, पैसा दीजिए। मानो सुजीत अभी से ही आगे के जीवन के अभ्यास में लगा हो।

सुभाष चंद्र यादव के उपन्यास पर विचार करते हुए अनायास ध्यान जाता है कि उनका रचनाकार अपने लेखन के लिए कैसे विषय और कथ्य का चयन करता है। जनपक्षधरता उनकी रचना का प्राण-तत्व है। भाषा सिद्ध उपन्यासकार की शब्द साधना और विलक्षण सृजन-सामर्थ्य उनके उपन्यास को, उपन्यास के पात्रों को और विषय-जगत को बहुरंगी यथार्थ से भरे हुए है और ऐसे औपन्यासिक सृजन का प्रमुख आधार उनके वैविध्य से भरा जीवनानुभव है। मानवीय सरोकार से जुड़ा उनका उपन्यास समकालीन भारत के बृहत्तर मानवीय जीवन और उसके भावबोध की सारभूत अभिव्यक्ति बन गया है।

केदार कानन

14 जनवरी, 2015
तिला-संक्रांति

अंतिका प्रकाशन प्रा. लि.
सी-56/ यूजीएफ-4
शालीमार गार्डन, एक्सटेंशन-II
ग़ाज़ियाबाद-201005 (उ.प्र.)

मूल्य : ₹ 200/-

ISBN 978-93-88799-71-3

9 789388 799713



सुभाष चंद्र यादव

बिहार के सुपौल जिले में जनमे सुभाष चंद्र यादव मैथिली तथा हिंदी के प्रसिद्ध लेखक हैं। कहानी, उपन्यास, यात्रा-वृत्तांत, आलोचना और अनुवाद के क्षेत्र में उनकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। वे सिद्धहस्त कथाकार हैं। उन्होंने कई मूल्यवान और कालजयी रचनाओं का सृजन किया है। हिंदी में 'राजकमल चौधरी का सफ़र' तथा मैथिली में 'घरदेखिया', 'गुलो' एवं 'रमता जोगी' उनकी सर्वाधिक चर्चित कृतियाँ हैं। वे कई प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित हैं। प्रोफ़ेसर पद से सेवानिवृत्ति के बाद सम्प्रति वे सृजनात्मक लेखन में सक्रिय हैं।

संपर्क : वार्ड नं. 16, सुपौल-852131 (बिहार)



रमण कुमार सिंह

बिहार के सुपौल जिले के बिसनपुर गाँव में जनमे रमण कुमार सिंह मूलतः मैथिली और हिंदी के कवि हैं। इनकी अब तक तीन कविता पुस्तकें—बाघ दुहने का कौशल (हिंदी), 'फेर सँ हरियर' और 'दुःस्वप्नक बाद' (मैथिली) के अलावा 'हमर पसार संसार सार' (मैथिली ललित निबंध) प्रकाशित हैं। सम्प्रति, 'अमर उजाला' नोएडा में प्रमुख उपसंपादक।

संपर्क : जी-1305, ऑफिसर सिटी-1, राजनगर एक्सटेंशन, गाजियाबाद-201017

ईमेल : kumarramansingh@gmail.com